सात्विक आधार

सन्त रामसिंह

पिछली शताब्दी में जयपुर महाराजा सवाई माधोसिंह के विश्वस्त सामन्त ठाकुर मंगलसिंह भाटी बड़े धर्मप्राण राम-भक्त राजपूत हुए हैं। जयपुर के दक्षिण में जगतपुरा के पास मनोहरपुरा गांव उनकी जागीर में था। ठाकुर मंगलसिंह महाराजा माधोसिंह के पास रहा करते थे। वे महाराजा के किलेदार थे। सीधे सच्चे राजपूत थे। सदा भक्ति-भाव में लगे रहते थे। ठाकुर मंगलसिंह के घर 3 सितम्बर, 1898 ई. को एक ऐसे होनहार बालक ने जन्म लिया जिसकी गणना आगे चलकर गृहस्थ सन्तों में की जाने लगी। सुरत सम्भालने के बाद बालक रामसिंह को अपने चारों ओर ऐसा वातावरण मिला जो राममय था; अतः बाल्यावस्था से ही शुभ संस्कार बनते गये। भगवान राम के प्रति कोमलमति बालक का बाल-विश्वास दृढ़ होता चला गया। पिता निरन्तर राम-जप में लगे रहते। माता में निराला सेवा-भाव था। गरीबों को कुछ न कुछ देती रहती। राम नाम की माला जपती रहती।

ठाकुर मंगलसिंह को ध्यानावस्था में सीताराम के युगल दर्शन हुआ करते थे। यह बात आपने बालक रामसिंह को बतायी। बालक रामसिंह ने कहा कि मुझे भी दर्शन कराओ। बालक में तब से ही जिज्ञासा जाग्रत हो गई। उसकी वृत्ति राम की ओर मुड़ गई। धीरे-धीरे बालक को यह आभास होने लगा कि राम मेरे साथ रहता है, मेरी ओर देखता रहता है। वह अपने पूज्य पिता की भाँति राम-भक्त बन गया।

सुख-सुविधा सम्पन्न सामन्त परिवार में जन्म लेने के कारण बालक रामसिंह का लालन-पालन बड़े लाड़-प्यार से हुआ। घर में उनसे

बड़ी एक बहिन थी और कोई दूसरा बालक नहीं था। ठाकुर मंगलसिंह अपने इस इकलौते बेटे को अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते थे। ग्यारह वर्ष की आयु में नोबल्स स्कूल जयपुर में भर्ती करा दिया जो महाराजा कालेजिएट स्कूल कहलाता था। उन दिनों यह स्कूल चाँदपोल बाजार जयपुर में रामचन्द्रजी के मन्दिर में चलता था। आगे चलकर यही संस्था मान नोबल्स स्कूल के नाम से गोनेर के गढ़ में चला करती थी। इस विद्यालय में सामन्त परिवारों के राजपूत बालक शिक्षा ग्रहण करते थे।

बालक रामसिंह ने इस देवालय में पांच वर्ष तक शिक्षा ग्रहण की। बालक रामसिंह को अपनी अभिलाषा के अनुकूल देवालय में स्थित विद्यालय में भक्ति-भाव भरा वातावरण मिल गया। भगवान राम के इस विशाल मन्दिर में युगल-दर्शन दूर से होते हैं। पुरुषोत्तम राम के प्रति बालक राम की प्रीति निरन्तर पांच वर्ष तक पोषण पाती रही। सन्त रामसिंह कहा करते थे–

पढ़िबो लिखबो सीखबो, यह गुडिया का खेल।
जब प्रीतम साचो मिले, देय ताक में मेल॥

सामन्त सभ्यता के बीच रहकर बालक रामसिंह ने कुलीन परिवारों में प्रचलित शिष्टाचार तो सीख लिया, किन्तु तथाकथित विलासिता की ओर एक कदम भी नहीं बढ़ाया। अपने पिताकी भाँति सादा जीवन और उच्च विचारों की ओर अग्रसर होते चले गये।

ठाकुर मंगलसिंह के एक स्नेही मित्र थे मानपुरा के ठाकुर अरिशालसिंह। अरिशालसिंह कभी-कभी बालक रामसिंह को अपने साथ ले जाते। दो-चार दिन अपने पास रखते, लाड़-प्यार करते, खिलाते-पिलाते और वापस पहुँचा जाते। खेतड़ी के स्वनामधन्य राजा अजीतसिंह के संग रहने के कारण ठाकुर अरिशालसिंह को युवा तपस्वी स्वामी विवेकानन्द का दर्शन-लाभ मिला। उस महान् हिन्दू संन्यासी के सम्पर्क में आने के कारण अरिशालसिंह का जीवन-दर्शन ही बदल गया। वे योग-साधना में

संलग्न हो गये। अरिशालसिंह ढलती रात में ध्यान मग्न हो जाते और ध्यानावस्था में ही प्रातः हो जाता। बालक रामसिंह को बचपन में ठाकुर अरिशाल सिंह जैसे सुलझे हुए साधक का सुसंग मिलता रहा।

युवावस्था में ही ठाकुर अरिशालसिंह की धर्मपत्नी का देहावसान हो गया। इससे उनमें विरक्ति का भाव जाग्रत हो गया। अरिशालसिंह ने दूसरा विवाह नहीं किया। वे जीवनपर्यन्त योग साधना में लगे रहे। ठाकुर अरिशालसिंह के दो पुत्रियां थीं, जिनका पालन-पोषण उनकी बड़ी मां ने किया। बड़ी पुत्री गोपालकंवर जब थोड़ी सयानी हो गई तो ठाकुर अरिशालसिंह ने उसके पीले हाथ करने की सोची। स्नेही सज्जन मंगलसिंह भाटी के समक्ष अपना प्रस्ताव रखा। ठाकुर मंगलसिंह ने इतना ही कहा कि रामसिंह आप ही का है। सत्तरह वर्ष की आयु में कुंवर रामसिंह का विवाह ठाकुर अरिशालसिंह की सुपुत्री गोपालकंवर के साथ संपन्न हो गया।

उन दिनों देश पराधीन था। युवक रामसिंह ब्रिटिश सेना में भर्ती होना चाहते थे। अपने पिता के कहने पर सेना में भर्ती होने का विचार त्याग दिया। आपके पिता ने कहा कि हमारे पूर्वज जयपुर दरबार की सेवा में रहे हैं। नौकरी करनी है तो जयपुर दरबार की नौकरी करो। जयपुर में राज्य पुलिस विभाग में उन्हें नौकरी मिल गई।

जब रामसिंह पुलिस सेवा में जाने को हुए तो उनके पूज्य पिता ठाकुर मंगलसिंह ने उन्हें समझाया कि यदि नौकरी में पूरा न पड़े तो घी-आटा घर से ले जाना, किसी के सामने अपना हाथ मत पसारना; रिश्वत खाने वालों का हमने बुरा हाल होते देखा है। पिता की ओर से नेक सलाह मिल गई। रामसिंह ने इस बात की गांठ बांध ली। कभी किसी के सामने हाथ नहीं पसारा। पराये पैसे को कभी स्पर्श नहीं किया। पराया अन्न कभी ग्रहण नहीं किया। वे प्याऊ पर भी पैसा देकर पानी पीते थे।

4

समय पाकर थानेदार रामसिंह की उच्च नैतिकता और ईमानदारी का सुयश चारों दिशाओं में फैलने लगा। जब वे आसलपुर जोबनेर पुलिस चौकी में हैड कान्सटेबल के पद पर थे तो राय साहब गोपालदास डीआईजी पुलिस, पुलिस चौकी का मुआयना करने पधारे। रामसिंह उनकी अगवानी करने पहुँचे। रामसिंह को देखकर राय साहब कहने लगे, ''जब तुम इतने साफ सुथरे हो तो तुम्हारी चौकी भी साफ सुथरी होगी। रामसिंह हमने सुना है तुम बड़े ईमानदार हो। हमको तुम पर नाज़ है।''

यह सुनते ही रामसिंह ने अपनी पलकें नीचे कर ली। राय साहब गोपालदास ने आगे बढ़कर रामसिंह की पीठ थपथपाई और वे वहीं से वापस लौट गये। कहते हैं गोपालदास डी.आई.जी. का बड़ा दबदबा था; चोर उनके नाम से कांपते थे।

एक पुलिस थानेदार जो निकट के रिश्तेदार थे, एक बार ठाकुर मंगलसिंह से मिलने गांव मनोहरपुरा आये। संयोगवश उस दिन रामसिंह भी घर आये हुए थे। थानेदार साहब ने बातों ही बातों में आपके पिताजी से पूछा कि रामसिंह कुछ ऊपर की कमाई भी करता है या नहीं। आपके पिताजी ने उत्तर दिया कि वह तो एक पैसा भी नहीं लेता। इस पर रिश्तेदार बोले कि इसमें क्या हर्ज़ है। किसी का दिल मत दुखाओ; दूसरे का काम निकल जाने के बाद यदि रिश्वत ले ली जाए तो कोई बुराई नहीं। पिता ने पुत्र को बुलाया और कहा थानेदार साहब क्या कह रहे हैं, इनकी बात सुनो। थानेदार ने वही बात दोहराई। यह सब सुनकर रामसिंह कहने लगे कि इस बात का बहादुरसिंहजी एस.पी. साहब को पता लग जाए तो। थानेदार साहब तपाक से बोले, ''उन्हें पता ही क्यों लगने दो, आँख बचाकर लो।''

यह सुनते ही रामसिंह ने स्पष्ट उत्तर दिया, ''आप क्या फरमा रहे हैं? दो आँखों वाले से तो मैं डरूँ और हज़ार आँखों वाले से न डरूँ। कोई भी नहीं देखता है तो राम तो देख रहा है।'' यह उत्तर सुनकर आपके पिताजी को बड़ी प्रसन्नता हुई।

गुरु भगवान का आगमन

युवक रामसिंह के नैतिक चरित्र और प्रगाढ़ निष्ठा ने उन्हें ऐसे अवसर प्रदान कर दिए कि उनके जीवन में युगान्तर उपस्थित हो गया। युवक रामसिंह के जीवन में गुरु भगवान का आगमन एक ऐसी ही अलौकिक घटना है। पवित्र सलिला गंगा हिमालय की ऊंचाइयों से उतरकर गंगासागर तक कैसे चली आई इसकी एक पावन गाथा है।

मुगल सम्राट औरंगजेब के समय में एक महान् सूफ़ी संत पैदा हुए, जिन्होंने सूफ़ी-साधना को एक नई दिशा दी। वे सूफ़ी संत थे मिर्जा मज़हर जानजाना। जानजाना ने सूफ़ी-धर्म-साधना के प्रति उदार दृष्टिकोण विकसित किया और उसे मानव-धर्म का रूप दिया। अपनी स्पष्टवादिता के कारण धर्मान्ध लोगों ने मज़हर साहिब का वध कर दिया। किन्तु, वे मानव मात्र के लिए धर्म जगत में एक नया मार्ग प्रशस्त कर गये।

उत्तर प्रदेश में भगवती भागीरथी के तट पर मज़हर साहिब के पदचिह्नों पर चलने वाला एक महान् सूफ़ी संत फिर पैदा हुआ। वे ख़ाली समय में बकरियाँ चराते और गाँव के बच्चों को पढ़ाया करते। उनके एक पुत्र था जो किशोरावस्था में ही चल बसा। इस हृदयविदारक घटना से लड़के की माता तड़प उठी। वह दिन-रात पुत्र की याद में आँसू बहाती रहती। सूफ़ी संत ने बहुत समझाया, पर माँ का मन कब मानने वाला था। एक दिन सूफ़ी संत ख़लीफा साहिब को एक उपाय सूझा। उनके पुत्र का एक सहपाठी उनसे बहुत हिलमिल गया था। वह वहीं बैठा पढ़ रहा था। ख़लीफा साहिब ने अपनी पत्नी से कहा, ''क्यों दिन-रात रोती रहती हो; तुम फज़लू को अपना बेटा क्यों नहीं मान लेती।''

माता ने फज़लू की ओर निहारा। उसे अपने पास बुलाया। सीने से लगा लिया और आँसू बहाने लगी। फज़लू ने गुरु माता के आँसू पोंछ दिए। उसे नई माँ मिल गई और माता को अपना खोया हुआ पुत्र मिल गया।[1]

---

1. महान् सूफ़ी संत हज़रत मौलाना शाह फ़ज़्ल अहमद ख़ाँ रायपुरी — बाल कुमार खरे

फज़लू बोला, "अम्मा आप रोया मत करो। मैं आपका बेटा ही हूँ।" फज़लू ने जीवनपर्यन्त इस पावन संबंध को निभाया। फज़लू एक होनहार बालक था। ख़लीफा साहिब ने उसे अपना लिया। सूफ़ी मत में दीक्षित कर अपनी समस्त आध्यात्मिक सम्पदा से फैज़याब कर दिया। अन्तिम समय सूफ़ी संत ने अपने प्रिय शिष्य फ़ज़्ल अहमद को कहा कि तुम्हारे पास एक दीगर मज़हब को मानने वाला लड़का आयेगा, उसे दिल से अपना लेना, कोई कोताही मत करना।

हज़रत मज़हर जानजाना की भांति शाह फ़ज़्ल अहमद ने महान् उदारता का परिचय दिया। आपने रूहानियत को मज़हब के बन्धनों से मुक्त माना। गुरु वचनों का अक्षरशः पालन किया। आपके प्रताप से वह अमूल्य सम्पदा एक सुयोग्य हिन्दू साधक के हाथ लग गई।

उन दिनों शाह फ़ज़्ल अहमद रायपुर छोड़कर फर्रुखाबाद चले आये। वहाँ एक मदरसे के दरवाजे की कोठरी में वे अपना गुज़र बसर करते थे। संयोगवश वहीं एक हिन्दू युवक दूसरी कोठरी में किराये पर रहता था। वह युवक फतेहगढ़ की तहसील में सेवारत था। परस्पर कोई परिचय नहीं था। शिष्टाचारवश वह युवक जब भी शाह साहिब के सामने से गुज़रता, उन्हें बड़े अदब से सलाम करता। उस युवक का विनीत भाव शाह साहिब को पसन्द आ गया। अनजाने में ही प्रेम-सूत्र प्रगाढ़ होते चले गये।

एक बार वह युवक संध्या समय फतेहगढ़ से अपने आवास स्थल की ओर लौट रहा था। शीतकाल का सूर्य शीघ्र ही अस्ताचलगामी हो गया। आकाश में घटा घिर आई। शरद् ऋतु की शीत लहर चल रही थी। अचानक वर्षा आरम्भ हो गई। मूसलाधार वर्षा होने लगी। युवक बुरी तरह भीग गया। ठण्ड के मारे काँपने लगा। दरवाजा पार कर जब वह अपनी कोठरी की ओर जा ही रहा था कि शाह साहिब की उस पर नज़र पड़ी। शाह साहिब ने संकेत करके उसे अपने पास बुलाया। कपड़े बदलकर आने को कहा। शाह साहिब अंगीठी तप रहे थे। युवक अंगीठी के पास आ बैठा। अंगीठी का ताप पाकर भी कंपकपी मिट नहीं रही

थी। शाह साहिब में करुणा-भाव जाग उठा। युवक को चारपाई पर अपने पास बैठा लिया और उसे अपनी रज़ाई में ले लिया।

उन महापुरुष का स्पर्श पाते ही युवक की और ही दशा हो गई। मन समाहित होकर ध्यानावस्थित हो गया। आनन्द की लहरें उठने लगीं। अन्तर सहसा आलोकित हो उठा। भीतर-बाहर प्रकाश ही प्रकाश छा गया। एक ही बार में युवक के जीवन में युगान्तर उपस्थित हो गया। समर्थ गुरु को सुपात्र शिष्य मिल गया।

शाह फ़ज़्ल अहमद ने उस युवक को पहले दिन ही पहचान लिया। परम सत्ता ने स्वयं ही सुयोग ला उपस्थित किये। युवक सदासर्वदा के लिए उदारमना शाह साहिब के चरणों का चेरा बन गया। चौबीस वर्ष की अल्पायु में ही सुपात्र शिष्य को गुरु पदवी प्राप्त हो गई। वह सोलह वर्ष तक निरन्तर सुसंग लाभ लेता रहा।

यह सुपात्र शिष्य थे लाला रामचन्द्र। उत्तर प्रदेश में एक प्रतिष्ठित चौधरी कायस्थ परिवार में आपका जन्म हुआ था। आगे चलकर लालाजी साहिब और उनके सुयोग्य शिष्यों ने समूचे उत्तरभारत में 'रामाश्रम सत्संग' की एक नई ज्योति जगा दी। हिन्दू-मुसलमान के तटबन्धों को तोड़ सूफ़ी साधना को एक नया आयाम मिल गया। आज हजारों-लाखों लोग इससे लाभान्वित हो रहे हैं। प्रेम का मार्ग मानव मात्र के लिए खुल गया है। विवेकशील, कृतज्ञजन, उदारमना परमसन्त शाह फ़ज़्ल अहमद खाँ का नाम बड़े समादर के साथ लेते हैं। उन्हें हुज़ूर साहिब कहकर सम्बोधित करते हैं। हुज़ूर साहिब कहा करते थे कि "खुदा मज़हब में नहीं मुहब्बत में है। सूफ़ी साधना किसी मज़हब की ताबेदार नहीं है।" महात्मा रामचन्द्र ने अपने जीवनकाल में ही इसे चरितार्थ कर दिखाया।

महात्मा रामचन्द्र के डॉ. श्रीकृष्णलाल एवं डॉ. चतुर्भुज सहाय जैसे अनेक सुयोग्य शिष्य हुए, जो धर्म प्रचार में अग्रणी रहे। लालाजी साहिब की गुरु परम्परा में उनके अनुज महात्मा रघुवर दयाल और सन्त बृजमोहनलाल के नाम बड़े समादर के साथ लिए जाते हैं। हुज़ूर

साहिब के प्यारे शिष्य महात्मा रामचन्द्र हमारे सन्त थानेदार के गुरु भगवान हैं। गुरु भगवान राजस्थान में आकर अपने प्रिय शिष्य रामसिंह से किस प्रकार मिले यह अपने आप में एक रोचक प्रसंग है।

आरम्भ के वर्षों में रामसिंह जयपुर स्टेट रेलवे पुलिस में काम करते थे। सन् 1926 में वे रेलवे स्टेशन निवाई की पुलिस चौकी में बदलकर आये। कुछ ही दिनों में चारों ओर यह बात फैल गई कि नया पुलिस चौकी इन्चार्ज ईमानदार आदमी है, एक पैसा भी रिश्वत नहीं लेता। दूसरों को सिगरेट पिला देता है, किन्तु स्वयं दूसरों की सिगरेट नहीं पीता। एक रेलवे कर्मचारी कृष्णचन्द्र भार्गव यह सब सुनकर बड़े प्रभावित हुए। वे रेवाड़ी के रहने वाले थे और महात्मा रामचन्द्र के शिष्यों में से थे। रामसिंह से मिलकर भार्गव को बड़ी प्रसन्नता हुई। समान विचारधारा के होने के कारण दोनों में स्नेह बढ़ता चला गया। परस्पर घुल-मिल गये।

एक दिन सत्संगी सज्जन भार्गव ने पूछा कि आपका कोई गुरु है या नहीं। रामसिंह ने बताया कि जिस किसी से कोई बात सीखने को मिल जाय उसे ही गुरु मान लेता हूँ। इस पर भार्गव ने कहा कि यह बात और है; सत्गुरु की बात दूसरी है। मेरे तो बड़े समर्थ सत्गुरु हैं। भार्गव साहब ने अपने गुरुदेव का परिचय दिया और दूसरे दिन पूज्य लालाजी साहिब का एक फोटो रामसिंह को सौंप दिया। रामसिंह ने उस फोटो को अपनी टेबल पर सामने रख लिया। वे फोटो को निहारते रहते। तब से ही फैज़ आने लगा। जब लेटते तो वही तसव्वुर। अजीब मस्ती छा गई।

युवक रामसिंह ने पूज्य लालाजी साहिब को एक पत्र में लिखा कि मेरा इरादा मेसमेरेजम सीखने का है। उधर से उत्तर मिला, **"अजीजबन्द! मैं तो केवल नाम आधार हूँ। ईश्वर की तरफ मुँह किए हूँ। मेसमेरेजम नहीं जानता।"**

रामसिंह ने पुनः पत्र दिया, **"मैं तो आपका हो चुका।"**

जवाब आया कि शरीर स्थूल है। एक बार मिलना जरूरी है। इस पर पत्रोत्तर दिया कि मुझे छुट्टी नहीं मिलेगी।

प्रेमाकर्षण बढ़ता गया। तसव्वुर जारी रहा। आखिर एक दिन स्वयं गुरु भगवान अपने प्रेमी शिष्य से मिलने चले आये।

भार्गव साहिब का निवाई से बांदीकुई तबादला हो गया और रामसिंह रेलवे पुलिस चौकी पलसाना आ गये। पूज्य लालाजी साहिब बांदीकुई भार्गव साहिब के पास आकर ठहरे। भाटी रामसिंह को सूचना मिली। तुरन्त बांदीकुई पहुँचे। हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि मैं रामसिंह हूँ।

गुरु भगवान ने देखते ही फरमाया, ''तुम हूबहू वैसे ही हो जैसा हमने तुम्हें देखा था। तुम्हारा प्रेम मुझे यहाँ तक खींच लाया। प्रेम ऐसी चीज़ है जो सातवें आसमान को चीरकर निकल जाता है।''

रामसिंह ने निवेदन किया कि मुझे सुबह वापस जाना होगा। रवानगी दिखाकर आया हूँ। इस पर गुरु भगवान बोले कि मैं तुम्हारे लिए आया हूँ, तुम्हारे साथ ही चलूँगा। आप पलसाना साथ पधारे। दूसरे दिन जयपुर साथ-साथ आये। जयपुर में सांथा ठाकुर साहब की हवेली में बिराजे। सिटी पैलेस जयपुर में सन्त थानेदार ने बहुत वर्ष बाद सत्संगियों को आगे की बात इस प्रकार सुनायीः-

''दूसरे दिन जब मैं चांदी की टकसाल से तांगे में बैठा आ रहा था तो तांगे वाले ने एक गज़ल गाई-

तेरे इश्क का यह असर देखता हूँ,
तरक्की पे दरदे ज़िगर देखता हूँ।
समाया है जब से तू मेरी नज़र में,
जिधर देखता हूँ तुझे देखता हूँ।।

मैंने देखा मेरी यही हालत हो गई है।

अगले दिन जब मैं बड़ी चौपड़ से छोड़ी चौपड़ की ओर पैदल आ रहा था तो ऐसा लगा कि मैं उन्हीं की तरह देखने लगा हूँ; उन्हीं की तरह चलने लगा हूँ।

जब गुरु भगवान जयपुर से अजमेर पधारने लगे तो मैंने रेलगाड़ी में एक गुलाब का गुलदस्ता भेंट किया। इस पर आपने फरमाया- ''तुम्हारा यश गुलाब के फूल की सुगन्ध की तरह फैल जायेगा।''

अनुग्रह की अनुभूति

पूरे सों परिचय भया, सब दुःख मेला दूर।
निर्मल कीन्हीं आत्मा, ताते सदा हजूर॥
कबीर दिल दरिया मिला, पाया फल समरत्थ।
सायर मांहिं ढढ़ोरता, हीरा चढ़िया हत्थ॥

-सन्त कबीर

कबीर की भांति रामसिंह के भी सागर में गोता लगाते ही हीरा हाथ लग गया। समर्थ गुरु ने आ सम्भाला। जीवन के समस्त विषाद दूर हो गये। तीसरे ही दिन शिष्य तद्रूप हो गया। गुरु और शिष्य एकमेक हो गये। द्वैत की दुविधा दूर हुई। आत्मानुभूति का राजपथ प्रशस्त हो गया। अपना अस्तित्व ही गुरु में विलीन हो गया। समस्त चिन्ताएं जाती रहीं। जीवन में शांति और आनन्द शेष रह गया। अन्तर में प्रेम का सागर लहराने लगा। थानेदार का सहज ही भाग्योदय हो गया।

पुलिस सेवा में रहते हुए व्यावहारिक जीवन में भाटी रामसिंह को पग-पग पर संघर्ष करना पड़ रहा था। उनका मन यहाँ तक मान बैठा था कि पुलिस की नौकरी में निर्वाह होना कठिन है। किन्तु भाटी रामसिंह के जीवन में जब से गुरु भगवान का आगमन हुआ, उनके सब काम आसान होते चले गये। गुरु-कृपा से परमार्थ के भण्डार भर गये। सबसे बढ़कर बात यह रही कि- **वे एक कलश सोमरस पीकर भी उसे जचा-पचा गये। दुनिया में रहकर पूरे दुनियादार बने रहे। सब कुछ जानकर भी अनजान बने रहे। सब कुछ पाकर भी सामान्य बने रहे।**

निराला थानेदार

सबद हमारा खरतर खांडा, रहणि हमारी सांची।
लेखै लिखी न कागद मांडी, सो पत्री हम बांची॥

-गोरखवाणी

(हमने शब्द रूपी तलवार धारण करली है। वीरभाव से समस्त विकारों का नाशकर मैदान मार लिया है। हमारा आचरण सत्य से परिपूर्ण है। हमने आत्मबोध की वह खुली पत्रिका पढ़ली है, जो कहीं किसी पोथी में अंकित नहीं है।)

सन्त थानेदार इसी कोटि में आत्मवान् सत्पुरुष हुए हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम की भांति उनका जीवन-चरित्र नैतिकता और मानवता के क्षेत्र में एक नूतन रामगाथा है। महाभारत के बीच गीता का साकार स्वरूप है। राजा विदेह की भांति वे दोनों हाथों से तलवार चलाते रहे। एक ओर आपने मानवता के उच्च मापदण्ड स्थापित कर दिए, तो दूसरी ओर आत्मोद्धार के मार्ग पर निरन्तर अग्रसर होते रहे। सन्त थानेदार की गहनतम अनुभूतियों और आध्यात्मिक उपलब्धियों से अपरिचित रहते हुए भी आपका सदाचार और लोकव्यवहार पुलिस चौकी पलसाना से लगाकर सिटी पैलेस जयपुर तक सम्पर्क में आने वाले मानव मात्र को मोहित करता रहा है।

मानवोचित व्यवहार

सन्त थानेदार प्राणी मात्र के साथ सदा मानवोचित व्यवहार करते थे। पुलिस थाने में किसी अपराधी के साथ कभी बल प्रयोग नहीं किया। घोर अपराधी से भी कभी घृणा नहीं की। यदि थाने में कोई मुलजिम

पकड़ा गया तो स्वयं अपने हाथ से उसे भोजन कराते। जैसा भोजन स्वयं करते वैसा मुलजिम को कराते। मुलजिम को खिलाकर स्वयं भोजन पाते। उन दिनों थाने में बन्द अपराधी को एक पैसे के हिसाब से भत्ता दिया जाता था, जिसके चने खरीदकर अपराधी को दया विचार कर दे देते थे। सन्त थानेदार ने ऐसा कभी नहीं किया। वे स्वयं अपने हाथ से मुलजिम के लिए भोजन बनाते। लोग कहा करते थे कि थानेदार रामसिंह भाटी चोरों को घी-शक्कर खिलाकर चोरी बरामद कर लेते हैं। सच बात तो यह है कि उस सन्त पुरुष का देवोचित व्यवहार, स्नेह-सत्कार और शुद्धाचरण अपराधी तत्त्वों में भी सात्विक भाव जाग्रत कर देता था।

सन्त रामसिंह के ज्येष्ठ पुत्र हरिसिंह इसी आशय का एक रोचक प्रसंग सुनाया करते थे। उन दिनों वे नवलगढ़ अपने पिता के पास रह रहे थे। पुलिस थाना नवलगढ़ में एक चोर पकड़ा गया। उसे लाकर थाने में बन्द कर दिया। वह डर रहा था कि अब पुलिस वाले मारेंगे। रात को थानेदार साहिब स्वयं उसके लिए भोजन लेकर आये। बड़े प्रेम से अपने पास बैठाकर भोजन कराया। दूसरे दिन भी ऐसा ही स्नेहभरा व्यवहार किया। जब चोर भोजन कर रहा था तो थानेदार ने कहा कि रामजी, थोड़ा और ले लो। इस अलौकिक स्नेह सत्कार से चोर अभिभूत हो उठा और वह जोर-जोर से रोने लगा। उसने जो ज़ेवर चोरी किया था वह बता दिया। खेत में एक खेजड़ी की जड़ के नीचे ज़ेवर गड़ा हुआ मिला। चोरी का माल बरामद कर लिया गया। इसके बाद कहते हैं कि उसने सन्त थानेदार की शरण ले ली। चोरी करना छोड़ दिया। किसान का शान्त जीवन व्यतीत करने लगा। वह राम-भजन में लग गया। वह नवलगढ़ में थानेदार साहिब के पास आया करता था।

एक बार वह नवलगढ़ थाना क्षेत्र से बाहर कहीं रिश्तेदारी में जाना चाहता था। उन दिनों ऐसे लोग जिनका नाम चोरी की सूची में

दर्ज हो गया,थाना क्षेत्र से बाहर अनुमति पत्र लेकर जाते थे। वह नवलगढ़ थाने में अनुमति पत्र लेने आया। थानेदार ने उसे थाना क्षेत्र छोड़कर जाने को मना कर दिया, किन्तु वह मान नहीं रहा था। सन्त रामसिंह के ज्येष्ठ पुत्र हरिसिंह बताते हैं कि उस दिन काकासा उस पर गर्म हो गये। वह हाथ जोड़कर बोला थानेदार साहब जब आप नाराज़ हो गये तो कोई बात जरूर है। मेरा बुरा हो सकता है। मैं कहीं नहीं जाऊँगा।

सन्त थानेदार बड़े सत्यनिष्ठ और साहसी व्यक्ति थे। सामान्य जीवन में भी आपने कभी सत्य का आश्रय नहीं छोड़ा। आपको अनेक बार कोर्ट में शहादत के लिए जयपुर आना होता। जिस दिन संध्या को जयपुर से अपने गाँव चले जाते, बिल में उस दिन का दैनिक भत्ता नहीं दिखाते। सदा किफायत से काम लेते। पैसा सोच समझकर खर्च करते। बचा हुआ पैसा परमार्थ में लगाते रहते। कोई खोटा सिक्का हाथ में आ जाता तो उसे दूर जमीन में गाड़ देते। जीवन में कभी अनुचित मार्ग नहीं अपनाया। जब तक आपको पूरा यकीन नहीं हो जाता, किसी को मुलजिम करार नहीं देते। जब पूरे सबूत मिल जाते, तभी कोर्ट में चालान पेश करते। निर्दोष का सदा पक्ष लेते।

साँगानेर थाना क्षेत्र के गाँव शिवपुर की घटना है। एक युवती ससुराल नहीं जाना चाहती थी। लम्बे समय से पीहर अपने पिता के घर रह रही थी। उसका पति और श्वसुर उसे लेने आये। पीहरवालों ने उसे उनके साथ कर दिया। तीनों पैदल चले जा रहे थे। मार्ग में एक कुआँ आया। वह युवती सहसा कुएँ में कूद गई। उसका पति तत्काल लाव पकड़कर कुएँ में उतरा। उसे जीवित बचा लिया। वह मुड़कर पीहर चली आयी। वहाँ आकर उसने बताया कि मुझे उन दोनों ने पकड़कर बलपूर्वक कुएँ में धकेल दिया और वहाँ से भाग गये। मेरा रोना-चिल्लाना सुनकर ढाणी के लोग भागकर आये और मुझे बचा लिया। पीहरवालों ने थाना साँगानेर में इसकी रपट दर्ज करायी।

14

थानेदार साहब उस दिन किसी शहादत में जयपुर कोर्ट में गये हुए थे। उनका सहायक अधिकारी पुलिस बल लेकर शिवपुर पहुँचा। मामले की तहकीकात की। बयान दर्ज किए, केस बनाया और बाप-बेटे दोनों को थाने में लाकर बन्द कर दिया। दूसरे दिन जब थानेदार पुलिस थाना साँगानेर पहुँचे; सहायक ने उनके सामने केस रख दिया। सन्त थानेदार ने मामले की जाँच की। बाप-बेटे को अपने सामने बुलाया। लड़के के पिता ने सच्ची बात कह सुनायी। उधर शिवपुर रावजी को थानेदार साहब की भुआजीसा ब्याहे हुए थे। रावजी की ओर से यह दबाव आया कि इन हत्यारे खातियों को माकूल सजा मिलनी चाहिए।

सन्त थानेदार शीघ्र ही सच्चाई तक पहुँच गये। आपने खाती के लड़के से कहा कि अपनी हथेली दिखाओ। दोनों हथेलियों में लाव के घर्षण से घाव बन गये थे। थानेदार ने युवक की हथेलियों को देखा और उन्हें निर्दोष घोषित कर दिया। उनके बयान दर्ज किए और उनको छोड़ दिया।

सन्त थानेदार के सदाचार, नैतिक व्यवहार और सत्यपरायणता की सुगन्ध तत्कालीन जयपुर राज्य में सर्वत्र फैल गई थी। न्यायालय भी उस अलौकिक सौरभ से अछूते नहीं रहे थे। जयपुर स्टेट के महा न्यायाधीश तक यह बात भली प्रकार से फैल चुकी थी। महा न्यायाधीश शीतलाप्रसाद वाजपेयी सन्त थानेदार को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

शेखावटी के नाज़िम इकराम हुसैन थानेदार रामसिंह की सच्चाई और ईमानदारी से इतने प्रभावित थे कि जिस केस में सन्त थानेदार ने चालान पेश कर दिया, उसकी तफ्तीश को सही मानकर फैसला दे दिया करते थे। ज़्यादा शहादत नहीं लेते। उस जमाने में निज़ामत का नाज़िम दिवानी और फौज़दारी का बड़ा अधिकारी माना जाता था। झुंझुनूं के नाज़िम इकराम हुसैन ने ऐसे ही एक चोर को

मण्डावा थानेदार भाटी रामसिंह के बयान पर मुलजिम करार देकर सज़ा दे डाली।

इस सज़ा के विरुद्ध जयपुर स्टेट चीफ कोर्ट में अपील हुई और उसकी सुनवाई जयपुर स्टेट के विख्यात महा न्यायाधीश शीतलाप्रसाद वाजपेयी ने की। चीफ जस्टिस वाजपेयी ने दोनों पक्षों को सुनने के बाद नाज़िम के फैसले को बहाल रखा और सज़ा बरकरार रख दी। बचाव पक्ष के वकील की दलील थी ''एक सब इन्सपेक्टर पुलिस के बयान को प्रमाण मानकर सजा देना उचित नहीं है। फौज़दारी कानून में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है।''

न्यायाधीश वाजपेयी ने इस दलील को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि यह बयान भाटी रामसिंह जैसे सत्यनिष्ठ सब इन्सपेक्टर का है। इस थानेदार का कथन कानून के प्रावधानों से कहीं ज्यादा वजनदार है।[1]

उन दिनों पुलिस विभाग से लगाकर जन-सामान्य तक यह बात फैल गई थी कि भाटी रामसिंह एक ऐसा थानेदार है जो रिश्वत लेना तो दूर प्याऊ पर मुफ्त का पानी नहीं पीता। कहीं मुफ्त का खाना नहीं खाता। तत्कालीन पुलिस महानिरीक्षक एफ.एस. यंग के कानों तक यह बात पहुँच चुकी थी। एक बार यंग साहब ने थानेदार रामसिंह की ईमानदारी से खुश होकर उन्हें खाने के लिए दो ताजा सन्तरे भेंट किए। थानेदार ने तुरन्त अपनी जेब से एक चौअन्नी निकाली और साहब की टेबल पर रख दी। अंग्रेज अधिकारी दुविधा में पड़ गया। वह कहने लगा कि रामसिंह क्या मैं तुमसे इनकी कीमत लूँगा?

थानेदार ने विनम्र उत्तर दिया, ''साहब बहादुर, मैं मुफ्त की चीज नहीं खाया करता। मैं माफी चाहता हूँ।'' आखिर आई.जी.पुलिस को पैसे लेने पड़े।

---

1. सन्त रामसिंह और उनकी सूफी भावना- नन्दकिशोर पारीक (नागरिक)

एक बार आपके पिताजी ने आपकी तरक्की के लिए किसी प्रभावशाली सामन्त से पुलिस अधिकारियों को कहलवाया। आपको जब इस बात का पता लगा तो आपने अपने पिताजी से स्पष्ट निवेदन किया कि मैं सिफारिश के बल पर तरक्की नहीं चाहता।

थानेदार रामसिंह की बड़ी पुत्री बाईसा दयालकंवर सीकर जिले के खूड़ ग्राम में अपने पतिदेव के साथ सती हो गई थीं। थानेदार जयपुर से दूसरे दिन सती स्थल पर पहुँचे। ग्रामवासियों ने आपसे पूछा कि हम पुलिस को क्या बयान दें। आपने स्पष्ट शब्दों में कहा कि सत्य बात कहो। ग्रामवासियों ने ऐसा ही किया। अन्ततः सब बरी हो गये।

साधु स्वभाव और करुणाभाव

सन्त थानेदार ठाकुर रामसिंह साहस और शौर्य के धनी थे। कैसी ही परिस्थिति क्यों न हो आप कभी विचलित नहीं होते, किसी जीवधारी के साथ क्रूर व्यवहार आप सहन नहीं कर पाते। अपने थाना क्षेत्र में कोई अत्याचार नहीं होने देते। यदि कहीं कुछ हो गया तो आप सदा सत्य का पक्ष लेते। फुलेरा में एक शिक्षक बालकों के साथ क्रूर व्यवहार करता था। विद्यालय में बालकों को कठोर शारीरिक दण्ड देता रहता। एक दिन थानेदार साहब के कानों तक यह बात पहुँच गई। दूसरे दिन सिपाही भेजकर शिक्षक को थाने में बुलाया। इसके बाद वह शिक्षक कभी बालकों को हाथ नहीं लगाता था।

एक बार थानेदार रामसिंह बस में बैठे नवलगढ़ से कहीं बाहर जा रहे थे। किसी टीले से नीचे उतरते समय मार्ग में बस उलट गई। थानेदार साहब बताया करते थे कि बस उलटने लगी तो मेरे मुख से राम-राम निकला। बाहर देखा तो पत्ते-पत्ते में उसका दीदार दिखाई दिया। किसी के कोई चोट नहीं आई। सब रेत झड़काकर खड़े हो गये। सहयात्री कहने लगे, "थानेदार साहब आज तो हम लोग आपके भजन के प्रताप से बच गये। अगर आप हमारे साथ नहीं होते तो न जाने हम लोगों का क्या हाल होता।" थानेदार विनम्र भाव से बोले, "राम सबका रखवाला है।"

17

नवलगढ़ में एक शिक्षक की पत्नी का देहान्त हो गया था। इस आघात को वह शिक्षक सहन नहीं कर पाया। उसे रात को नींद नहीं आती थी। इससे वह व्याकुल रहने लगा। साथी शिक्षकों ने उसे धीरज बँधाया। वह दिन-दिन थका जा रहा था। किसी ने उपाय बताया कि सन्त थानेदार की शरण ले लो। वह शिक्षक अपनी फरियाद लेकर नवलगढ़ थाने में उपस्थित हुआ। थानेदार साहब ने उसकी शिकायत सुनी और संध्या को आने को कहा। सन्त थानेदार ने तीन दिन उसे अपने साथ पूजा में बैठाया। तीसरी रात ऐसी गहरी नींद आई कि सूर्योदय तक सोता ही रहा। वह शिक्षक थानेदार साहब का सुसंग लाभ लेता रहा।[1]

उन्हीं वर्षों की बात है, एक बार अपने स्नेही सत्संगी युवा थानेदार राजावत कुशलसिंह के साथ आप महलाँ पधारे। कुशलसिंह के बड़े भाई की पत्नी के पैर में भयंकर पीड़ा होती थी। दर्द के मारे रात भर सुख से सो नहीं पाती। महिला ने अपनी वेदना सन्त थानेदार को कह सुनायी। भगवान की ऐसी कृपा हुई कि उसी दिन दर्द जाता रहा। रात को सुखपूर्वक नींद आयी।

सन्त थानेदार के करुणाभाव के अनेक प्रसंग हैं। किसी सत्संगी का सिर दर्द दूर हो गया, तो किसी सत्संगी का आँख का घाव एक ही रात में भर गया। जिस किसी ने भी करुण पुकार की उसी का बेड़ा पार हो गया। आये दिन सन्त थानेदार के समाधि मंदिर पर ऐसे ही चमत्कार होते रहते हैं। समर्थ सब कुछ कर सकता है। हमें इन प्रसंगों को अधिक महत्त्व नहीं देना है। सन्त पुरुषों के लिए ये सब सामान्य बातें हैं। यथार्थ में स्थूल देह से जो कुछ किया जा सकता है, वह सब कुछ नहीं है। इससे परे चेतन

---

1. वे सत्संगी शिक्षक थे श्री बालगोविन्द तिवाड़ी। तिवाड़ी साहब आगे चलकर शिक्षा विभाग राजस्थान में उच्च पदों पर आसीन रहे।)

मन में असीम शक्ति है, चेतन मन की अबाध गति है। जिसका चेतन जाग्रत हो गया, जिसके अन्तर में गति संचार हो गया, जो शुद्धात्मा उस भाव-भूमि पर आरूढ़ हो गया, उसके लिए ये सब सहज कार्य हैं। ऐसे सत्पुरुष की इच्छा शक्ति इतनी प्रबल हो जाती है कि जिसके लिए उसने दुआ मांग ली वही दुआ कबूल हो गई। जीवन में प्रार्थना का यही महत्त्व है।

सूफ़ी वह है जो मुहब्बत इलाही में डूबा रहता है। थानेदार रामसिंह सही अर्थों में एक सच्चे सूफ़ी संत हुए हैं। आप सदा ईश्वर प्रेम में निमग्न रहते। ईश-प्रेम के शान्त सागर में जहाँ आनन्द की लहरें उठती रहतीं, आकंठ मग्न होकर हमारे सन्त थानेदार ने अपने जीवन को सार्थक कर लिया।

सन्त थानेदार में सबसे बड़ा चमत्कार यह देखने को मिला कि आपने अपने अहं को मटियामेट कर दिया था। अपने अस्तित्व को गुरु भगवान में विलीन कर दिया था। कहते हैं कि एक बार तो वे अपना नाम ही भूल गये। कोर्ट में किसी केस की शहादत में हाज़िर हुए थे। रीडर ने बयान दर्ज करने को नाम पूछा। आपको नाम याद नहीं रहा। बड़े संकोच में पड़ गये। पुलिस के वकील ने याद दिलाया कि आपका नाम रामसिंह है। आपने उस वकील के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। मजिस्ट्रेट महोदय भी देखते ही रह गये।

गुरु-कृपा से जब मार्ग मिल जाता है तो चंचल मन शान्त और स्थिर हो जाता है। साधक बाहर-भीतर एक हो जाता है। मन उच्च भाव-भूमि पर विचरण करने लगता है। अन्तर आनन्दित हो उठता है। सीमित काया में असीम प्रेम उमड़ पड़ता है। समस्त चराचर जगत् आत्मवत् प्रतीत होने लगता है। तब प्रेम में रसमग्न हुआ साधक परमपिता परमात्मा के सहारे जीना सीख जाता है। सन्त थानेदार इसी कोटि के सत्पुरुष हुए हैं।

वे कहा करते थे कि जब किसी सन्त के पास जाओ तो अदब और सब्र के साथ उसकी इनायत का इन्तजार करो। जो करोड़पति है वह चाहे तो किसी को लखपति बना सकता है। पुस्तकें पढ़ने से क्या होगा, गुरु में फ़ना होने से सब काम बन जायेगा। एक संकेत में ही काम बन जाता है। जो गुरु की तरफ रूजू व महव रहते हैं, वे सहज ही में गुरु के रंग में रंग जाते हैं।

जितनी अधिक पीरो-मुरशद (सद्गुरु) की शरण ली जाएगी और उनसे प्रेम करोगे उतना ही अभ्यास में सदा नया व ताजा बल मिलता रहेगा। मन-मत होने का डर नहीं रहेगा। सदा बरकत ही बरकत रहेगी। गुरु के फैज़ से तबियत जमने लगेगी, लवलीन होने लगेगी, बे पिये मस्ती छा जाएगी। नई जान व उमंग आ जाएगी।

अपने दिल पर नज़र जमा लो। अपनी सुरता को दिल में बैठा लो। परमपिता परमात्मा से नाता जोड़ लो। उसकी याद में हरदम मस्त रहो। गहरी डुबकी लगा जाओ। दिल अपने में महव होने लगे तो उसे शाह राह मिल जाएगी।

प्रसन्नता

थानेदार रामसिंह की एक बड़ी विशेषता यह थी कि वह हर समय प्रसन्नचित्त रहते। हंसते-मुस्कराते रहते। नयनों में प्रेम छलकता रहता। उन्हें देख चित्त प्रसन्न हो जाता।

कहने को तो खुशमिज़ाजी और ज़िन्दादिली बड़ी दौलत है, किन्तु यह दौलत आसानी से नहीं मिलती। श्री रामकृष्ण परमहंस का कहना है कि पखावज के बोल मुँह से बोलना आसान है, हाथ पर आना बहुत कठिन है।

सन्त थानेदार की प्रसन्नता का रहस्य यही रहा होगा कि वे भगवान के भरोसे रह रहे थे। वह परमपिता परमात्मा उन्हें जैसे रखता उसी में खुश थे। कहा करते थे कि **"हर हाल में खुश रहना, यह है खुदा परस्ती।"**

सन्त थानेदार का सुयश इतना फैल चुका था कि वे जिस थाने में जाते, थाना क्षेत्र की जनता में प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती। महात्मा थानेदार आ गया। अब यहाँ अमनचैन रहेगा। थाने का वातावरण ही बदल जाता। थानेदार साहब को हँसते-हँसाते देख सब प्रसन्न हो जाते। थाने में बन्द अपराधी भी इस प्रभाव से अछूते नहीं रहते।

आप जीवनपर्यन्त इसी प्रकार हँसी लुटाते रहे। सिटी पैलेस से जब विदाई ली उस समय भी आपके चेहरे पर वही मधुर मुस्कान थी। सिटी पैलेस में अचानक अधिक तबियत खराब हो जाने के कारण सत्संगी घबरा गये। जल्दी से अस्पताल लेकर गये। दो सत्संगियों ने आपको अपने हाथों पर बैठाया और सिटी पैलेस की वक्राकार सुरंग से नीचे ले आये। उस समय भी आप मुस्करा रहे थे। बालक की भाँति विनोद कर रहे थे। जैसे ही सत्संगी आपको लेकर चलने लगे, आपने अपने दोनों हाथ दोनों सत्संगियों के कंधों पर रख लिये और हँसकर जोर से बोले, ''राजा राजा पालकी जय कन्हैयालाल की।''

स्वच्छता

थानेदार रामसिंह बड़े साफ सुथरे रहते थे। स्वच्छ मन, स्वच्छ तन और स्वच्छ वातावरण आपकी अपनी अभिरुचि थी। जिस थाने में पहुँच जाते उसमें एक नवीनता आ जाती। थाने का भवन, प्रांगण और परिसर सदा साफ-सुथरा मिलता। यदि स्वीपर या सिपाही झाड़ू देना भूल जाते, तो आप स्वयं झाड़ू लगा देते। सीकरिया गेस्ट हाऊस लक्ष्मणगढ़ शेखावाटी में एक सेवानिवृत्त सिपाही चौकीदार था। एक बार वहाँ सत्संग था, जिसमें उस सिपाही ने ऐसा ही एक प्रसंग सुनाया। सिपाही ने महात्मा थानेदार के कभी दर्शन नहीं किए थे, नाम सुना था। एक बार वह डाक लेकर मंडावा थाने में हाज़िर हुआ। एक आदमी थाने के चबूतरे पर झाड़ू लगा रहा था।

झाड़ू लगाकर वह आदमी भीतर गया। कपड़े बदलकर आया और थानेदार की कुर्सी पर बैठ गया। सिपाही को बहुत आश्चर्य हुआ कि यह तो वही आदमी है जो झाड़ू लगा रहा था। सिपाही को महात्मा थानेदार के प्रथम दर्शन इस प्रकार हुये, फिर तो वह सत्संग में आया करता था।

सन्त रामसिंह छोटे से छोटे काम को भी बड़े मनोयोग के साथ करते। जंगल जाकर लोटे को मांजते तो लोटा चमाचम करने लगता। कपड़े धोने बैठते तो उन्हें बगुले की पाँख बना देते। नहाने बैठते तो बड़ा आनन्द लेते। भोजन करते तो बड़े धीरज के साथ रस लेते हुए भोजन करते। जल पीते तो एक-एक घूंट गले से नीचे उतारते। पानी को भी स्वाद लेकर पीते। कभी कह उठते क्या ठण्डा मीठा जल है। स्वयं पाक साफ और मौज-मस्ती से रहते। साफा बाँधते तो ठेठ मारवाड़ी राठौड़ी मरोड़ का जिस पर अन्त में दो बलदार लपेटे लगाते। जीवन के अन्तिम दिनों में भी अपनी दाढ़ी संवारना नहीं भूले। एक छोटा सा गोल शीशा और कंघा रखते। टी.बी. सैनेटोरियम के कॉटिज वार्ड में सूर्योदय से पूर्व अपनी श्वेत शुभ्र डाढ़ी को इस तरह संवारते जैसे आज ही किसी बारात में जाएंगे।

अपना काम अपने हाथ

कै मन रहै आस पास। कै मन रहै परम उदास।
कै मन रहै गुरु कै ओलै। कै मन रहै कांमनि कै खोलै॥

- गोरखवाणी

मन कोई न कोई अवलम्ब चाहता है। आशा, निराशा आसक्ति और विरक्ति उसके मुख्य आश्रय स्थल हैं। प्रायः मन आशा-निराशा के बीच झूलता रहता है। भोग की ओर आसक्त होने पर कामिनी की क्रोड़ में समा जाना चाहता है। यदि विरक्ति की ओर बढ़ गया तो सांसारिक झंझावत से बचने के लिए सद्गुरु की ओट ले लेता है। शरणागति का सुखद मार्ग अपना लेता है।

गुरु गोरखनाथ के इस अनुभूत सत्य में सन्त थानेदार का कर्म-रहस्य छिपा हुआ है। भाटी रामसिंह ने सच्चे मन से गुरु भगवान की ओट ले ली। अपने आपको गुरु भगवान के समर्पित कर दिया। अपने अहं को गुरु में विलीन कर दिया। इससे कर्त्तापन जाता रहा। कर्म के प्रति अनासक्ति का भाव जाग्रत हो गया। जो कुछ करते गुरु भगवान का काम समझ कर करते। कर्म करने को तत्पर और जाग्रत रहते। कर्म को अपना पावन कर्त्तव्य मान कर करते। अपना काम अपने हाथों में ले लिया। किसी से कोई आशा या अपेक्षा नहीं रही। कर्म में आनन्दानुभव करते।

सन्त थानेदार दूसरों की सेवा में सदा तत्पर रहे। पुलिस सेवा में रहकर अपने कर्त्तव्य का भली प्रकार पालन किया। दीर्घसूत्रता और प्रमाद को कभी जीवन में स्थान नहीं दिया। एक परिचित सज्जन ने बताया कि पुलिस थाना मंडावा में उन्हें संत थानेदार के साथ रहने का अवसर मिला। थानेदार साहब अपना लोटा-डोर रखते। थाने के सामने कुआँ था, वहाँ प्रातः काल पहुँच जाते। स्नान आदि करके अपना पानी का मटका स्वयं भर लाते। अपना सब काम स्वयं अपने हाथ से करते। किसी सिपाही से अपना कोई काम नहीं लेते। अपना भोजन स्वयं बनाते। यहाँ तक कि कहीं दौरे पर जाते तो अपना बिस्तर स्वयं लेकर चलते।

पुलिस थाना फुलेरा में एक बार किसी तफ्तीश में जाने की जल्दी थी। एक सिपाही को भेजकर अपने लिए बाजार से एक रुपए के लड्डू मंगवाये। सिपाही ने हलवाई को बताया कि थानेदार साहब एक रुपए के लड्डू माँगा रहे हैं। हलवाई ने पूरे लड्डू तोल दिए और ऊपर से 2 लड्डू ज्यादा रख दिए। सिपाही ने लड्डू थानेदार साहब की टेबल पर लाकर रखे, जिनमें से दो लड्डू फिसलकर नीचे फर्श पर जा गिरे। थानेदार साहब ने सिपाही से पूछा कि लड्डू कहीं बेसी तो नहीं ले आये हो। सिपाही ने उत्तर

दिया, ''मैं तो बेसी नहीं लाया आपका नाम लेने पर हलवाई ने दो लड्डू बेसी डाल दिए।'' थानेदार साहब ने सिपाही से कहा कि नीचे से इनको उठाओ और हलवाई को वापस देकर आओ। आइन्दा ऐसा काम मत करना।[1]

उन दिनों आवागमन की इतनी सुविधा नहीं थी। आप जयपुर से पैदल चलकर अपने गाँव जाते। मोती डूँगरी से आगे बालू के टीले आरम्भ हो जाते। घर का सामान भी जयपुर से ले जाना होता। उन दिनों गाँव में तो नमक की थैली भी नहीं मिलती थी। खाकी रंग का एक बड़ा थैला रखते। सामान से भरे भारी भरकम थैले को कंधे पर लटका कर जयपुर से पद यात्रा आरम्भ करते। मार्ग में कोई परिचित या परिवार का सदस्य थैला लेना चाहता तो उसे देते नहीं। नाहरसिंह शेखावत बताते हैं कि एक बार वे पूज्य ठाकुर साहिब के संग जयपुर से मनोहरपुरा पैदल गये। रास्ते में थैला ले चलने के लिए दो बार आग्रह किया, किन्तु थैले के हाथ ही नहीं लगाने दिया। गाँव तक स्वयं ही थैले को लेकर चले।

जीवन के अन्तिम दिनों में अशक्त अवस्था में टी.बी. सैनेटोरियम के कॉटेज वार्ड में रात के समय प्यास लगती तो जैसे-तैसे स्वयं उठकर पानी पी लेते। उन दिनों आपको चलने फिरने में भी असुविधा रहती। आपके सुपुत्र नारायणसिंह कहा करते हैं कि रात के समय मैं वहीं बेंच पर लेट जाता। कभी जब आँख लग जाती तो मुझे आवाज नहीं देते, स्वयं ही पानी लेकर पीने लगते। रात को मैं जब पानी पिलाने उठता तो पानी की एक घूंट पीकर बड़े प्रसन्न होते, कहते ''मास्टर साहब, भगवान आपका भला करे।''

---

1. जयपुर गोविन्ददेव जी के प्रांगण में राजस्थान के परमसन्त स्वामी रामसुखदास महाराज के प्रवचन चल रहे थे। उनमें सन्त थानेदार भाटी रामसिंह की उच्च नैतिकता की चर्चा करते हुए स्वामीजी ने उक्त प्रसंग श्रोताओं को सुनाया था।

24

सदाचार और सत्यनिष्ठा

कोई बिरला सूरमा आपाण छिपाई।
मिल बैठा रहमाण सूं लव चेतन लाई॥

- विवेकवार निसाणी
भक्त कवि केसोदास गाडण

आत्मबोध का मार्ग मानव मात्र के लिए खुला है, किन्तु गिनती के लोग ही इस ओर अग्रसर होते हैं। शेष सम्पूर्ण मानव समुदाय तेरी-मेरी और हाय-धाय में लगा है। जो लोग अध्यात्म का मार्ग अपनाते हैं, उनमें अधिकांश बीच में ही अटककर रह जाते हैं। कहीं प्रमाद आ घेरता है, कहीं आत्मश्लाघा की चपेट में आ जाते हैं तो कहीं साधना का मिथ्याभिमान गहरे गर्त में धकेल देता है। कोई बिरला सूरमा ही अपने अहं से ऊपर उठकर, अपनी आध्यात्मिक उपलब्धियों को छिपाकर आगे बढ़ पाता है, उनमें भी कोई माई का लाल निरन्तर अन्तर्साधना में संलग्न रहकर आत्मबोध तक पहुँच पाता है। वही तथागत कहलाता है। तथागत वह है जो इस सृष्टि के परम सत्य को जान गया है। ऐसे महापुरुष का रहन-सहन और आचार-व्यवहार बदल जाता है। उसका हर आचरण मानवता का मापदण्ड बन जाता है। सन्त थानेदार का सदाचार और सत्यनिष्ठा ऐसे ही मानवीय गुण हैं।

सन्त थानेदार के हृदय में प्राणी मात्र के प्रति करुणा की अजस्र धारा प्रवाहित होती रहती थी। नये पेड़ लगाने एवं पेड़ों में पानी देने में उनकी बड़ी अभिरुचि थी। अपने गाँव के तन में आपने पेड़ों का वन खड़ा कर दिया। हरे पेड़ों को कोई सताता तो आपको बड़ी पीड़ा अनुभव होती। पुलिस थानों के परिसर में आपने अनेक पेड़ लगाये और उनकी पूरी परवरिश की। पक्षियों को दाने चुगाना तो आपका नित्यकर्म बन गया था। चिड़ी-कमेड़ी, मोर-कबूतर आपसे बहुत हिलमिल गये थे। थाना सवाईमाधोपुर में बुलबुल पक्षी

तो आपकी हथेली पर से किशमिश उठा ले जाती। अपनी आय का कुछ भाग सदा गरीबों की सेवा में व्यय करते रहे। इतनी गुप्त सेवा करते कि किसी को पता ही नहीं लगने देते। सन्त थानेदार ने बीमारी की हालत में अपनी आखिरी पेन्शन के पचास रुपए टी.बी. सैनेटोरियम की कॉटेज में आपकी सेवा में रह रहे सत्संगी चिरंजीलाल के हाथ खरल खरीदने को हकीम मातूराम के पास भेज दिये।[1] उसी संध्या को साबुनवाले सिन्धी खानचन्द डूलाणी को साथ लेकर लाला मातूराम रुपए लौटाने को हाज़िर हुए और निवेदन किया कि हुज़ूर मैं खुद खरल खरीद लूँगा। आप ये रुपए वापस ले लीजियेगा।

सन्त थानेदार विचार मग्न हो गये। फिर संभलकर बोले, ''हकीम साहब, इस गरीब का पैसा भी किसी भले काम में लग जाने दो।'' यह सुनकर सत्संगी मातूराम और खानचंद की आँखें भर आईं।

धरती पर थानेदार तो बहुत हुए हैं, किन्तु उस सन्त थानेदार की बातें ही निराली थीं। वह निराला थानेदार अपने सिपाहियों तथा सामान्यजन पर अपने सन्त-स्वभाव की अमिट छाप छोड़ गया; पुलिस विभाग में और आपाधापी की इस दुनिया में एक मिसाल कायम कर गया।

---

1. लाला मातूराम गरीबों को मुफ्त में दवा दिया करते थे। उनके पास दवा घोटने की खरल नहीं थी।

पुलिस सेवा के प्रसंग

सांभर से सवाईमाधोपुर

सांभर कोतवाल के पद पर पदोन्नत होने से पूर्व रामसिंह भाटी पुलिस चौकी आसलपुर जोबनेर में चौकी प्रभारी थे। चौकी का एक सिपाही उनका भोजन बनाया करता। वह सिपाही आस-पास के किसी गाँव का रहने वाला था। एक बार वह सिपाही अपने गाँव गया हुआ था। दूसरे दिन विलम्ब से पुलिस चौकी पर हाज़िर हुआ। चौकी के दूसरे सिपाही ने इस पर आपत्ति व्यक्त की और पूछा कि तुम इतनी देर से क्यों आये? तुम्हारी खातिर मुझे डबल ड्यूटी देनी पड़ी। इस पर उस सिपाही ने उत्तर दिया, ''क्या हो गया, मैं पतरोल साहब का खाना भी तो पकाता हूँ। उस समय तो तुम यह नहीं कहते कि लो आज मैं खाना पका देता हूँ।''

यह बात भाटी रामसिंह ने सुन ली। दूसरे दिन से वे अपना भोजन स्वयं बनाने लग गये और पुलिस सेवा में जब तक रहे अपने हाथ से ही भोजन बनाया। किसी सिपाही को चूल्हा जलाने अथवा मिर्च पीसने का भी मौका नहीं दिया। अपना काम अपने हाथ से करते। सिपाहियों से कोई काम नहीं लेते। यहाँ तक कि सरकारी काम से जब कभी इधर-उधर जाते, तो अपना बिस्तर स्वयं ही लेकर चलते।

इसी संदर्भ में रेलवे स्टेशन सवाईमाधोपुर का एक रोचक प्रसंग है। सन् 1931 में सन्त थानेदार का स्थानान्तरण सांभर से सवाईमाधोपुर हो गया। भाटी रामसिंह अपना बोरिया-बिस्तर लेकर रेलवे स्टेशन सवाईमाधोपुर आ उतरे। वे इस तलाश में थे कि कोई कुली मिल जाए। पुलिस थाना सवाईमाधोपुर का एक सिपाही प्लेटफार्म पर

संयोगवश मिल गया। सिपाही सादा कपड़ों में था। उसने नवागत थानेदार को पहचान लिया। उसने आगे बढ़कर कहा कि मैं सामान ले चलता हूँ। सिपाही ने थानेदार साहब का सामान उठा लिया और उन्हें थाने तक ले आया। नए थानेदार के आगमन के साथ ही थाने के सब लोग एकत्रित हो गये। सामान लानेवाले को भाटी रामसिंह पैसे देने लगे। वह सिपाही हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और कहने लगा, ''थानेदार साहब! मैं तो आपका सिपाही हूँ।'' निराला थानेदार पैसे देने पर तुला हुआ था और सिपाही हाथ जोड़े पीछे हट रहा था। अन्त में जीत थानेदार की रही। यह दुर्लभ दृश्य देख थानेवाले सब ठगे से रह गये। कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि ऐसा थानेदार भी हो सकता है।

उन दिनों थाने में सवारी के लिए ऊँट रहा करते थे। जो सिपाही ऊँट रखता वह शुतुरसवार कहलाता। उसे वेतन के अतिरिक्त ऊँट रखने का भत्ता मिलता। थानेदार रामसिंह जिस ऊँट पर सवार होकर अपने हल्के का दौरा करते, शुतुरसवार को अपने साथ भोजन कराते और ऊँट को अपनी जेब से चारा चराते। संयोगवश ऐसे एक शुतुरसवार से वर्षों पूर्व लेखक का मिलना हो गया। जब प्रसंग चलाया तो थानेदार रामसिंह का नाम लेते ही उसका चेहरा खिल उठा।

कहने लगा, **''रामसिंहजी भाटी की क्ये बात कराँ, बो तो देवता थानेदार हो, जीतो जागतो देवता। दौरा पर जातो तो सै नै जिमार आप जीमतो। मिनख की तो बात ही क्ये, जतै ऊँट कै चारो हाथ नहीं आतो आप नूँ नीचो नहीं करतो (अन्न ग्रहण नहीं करते)।'' यह कहते-कहते वृद्ध सिपाही की आँखें छलक आयीं। इस देश में थानेदार तो बहुत हुए हैं, किन्तु वह निराला थानेदार अपने सिपाहियों पर कैसी अमिट छाप छोड़ गया!**

जयपुर कोतवाली का सत्संग

थानेदार रामसिंह के सन्त-स्वभाव और देवोचित व्यवहार से जो भी उनके सम्पर्क में आता उनका होकर रह जाता। इस देवता थानेदार की मस्ती निराली थी। नेत्रों में अजीब मादकता थी और चेहरे पर मधुर मुस्कान। पुलिस

विभाग के अनेक अधिकारी उनसे प्रभावित हुए। कुछ ने थानेदार रामसिंह के सम्पर्क में आकर अपने जीवन का मार्ग ही बदल लिया, जिनमें डी.एस.पी. कुशलसिंह और एस.पी. मूलसिंह के नाम अग्रणी हैं।

मूलसिंह शेखावत वर्षों तक जयपुर के नगर कोतवाल रहे। उन दिनों थानेदार रामसिंह जब कभी जयपुर आते तो कोतवाली में मूलसिंह के पास ठहरते। दोनों में स्नेह संबंध और अन्तरंगता बढ़ती चली गई। नगर कोतवाल मूलसिंह बड़े विनोदप्रिय व्यक्ति थे। पुलिस की नौकरी को मेवे का पेड़ मानते थे, जब चाहो हिलाओ और मेवे से अपनी जेबें भर लो। कोतवाल मूलसिंह थानेदार रामसिंह से कहा करते थे कि आप कैसे थानेदार हो, मेवे के पेड़ तले बैठकर भी खाली पल्ले रह गये। हम तो दोनों हाथ मारते हैं और दोनों जेबें भर लेते हैं।

नगर कोतवाल मूलसिंह शेखावत जितने बलवान और भीमकाय थे उतने ही साहस के धनी थे। जयपुर स्टेट पुलिस में उनका बड़ा नाम था। चोर-डाकू उनके नाम से काँपते थे। कहते हैं पुलिस की एक दौड़ में जब एक कुख्यात डाकू घेरे में आ गया तो किसी पुलिस वाले की आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं हो रही थी। डाकू किसी भी क्षण प्राणों पर खेल जाता। जो आगे बढ़ता उसी पुलिसवाले को धाराशायी कर देता, इस भय के मारे कोई आगे नहीं बढ़ रहा था।

ऐसी कठिन घड़ी में घेरा तोड़कर भागते हुए डाकू को मूलसिंह शेखावत ने पीछे से झपटकर पकड़ लिया, अकेले ही अपने वश में कर लिया। किन्तु, कुसंगवश वे स्वयं बोतल के वश में हो गये थे, दिन-दिन दुर्व्यसन बढ़ता चला जा रहा था। इससे वे अपने आपको बड़ा निरुपाय और दुःखी अनुभव करने लगे थे, पर पिये बिना उनसे रहा नहीं जाता था। कोतवाल ने एक दिन अपनी वेदना सन्त थानेदार को कह सुनायी।

थानेदार रामसिंह कुछ देर चुप रहे और फिर कहने लगे, ''कोतवाल साहब एक नशा और भी है जो इस नशे से बढ़कर है। यह नशा तो चढ़ता-उतरता रहता है, पर वह नशा यदि एक बार चढ़ गया तो फिर उतरने का नाम नहीं लेता।''

कोतवाल कहने लगे, ''थानेदार साहब, ऐसे नशे की एक गुटक अपने इस मित्र को भी चखा दें। आप जैसा सज्जन स्नेही मुझे नहीं संभाल पाया तो फिर कौन सम्भालेगा।''

तीर निशाने पर लगा। उसी संध्या को कोतवाली भवन की दूसरी मंजिल में थानेदार रामसिंह ने काठ के एक तख्ते पर कोतवाल मूलसिंह शेखावत को अपने सामने बैठने को कहा। आन्तरिक सत्संग आरम्भ हुआ। कोई एक घण्टे बाद आँखें खुली तो कोतवाल हाथ जोड़कर अपने मित्र थानेदार से कह रहे थे, ''आज तो आपने मुझे खूब नशा कराया मैं तो सुधबुध ही भूल गया।''

सीकर जिले के महरोली ग्राम में एस.पी. मूलसिंह शेखावत का निवास स्थान है। विशाल भवन है और उसके सामने प्रशस्त प्राङ्गण, जिसके मध्य में एक मौरशली का सघन वृक्ष है। आज से कोई पचास वर्ष पूर्व इसी हरे वृक्ष की छाया में एस.पी. मूलसिंह ने अपनी यह व्यथा-कथा एक दिन लेखक को सुनाई कि किस प्रकार बाँह पकड़कर सन्त थानेदार ने नगर कोतवाल को कीचड़ में से बाहर खींच लिया। मदिरापान में आकंठ निमग्न उस भीमकाय कोतवाल को परमार्थ की डगर पर ला खड़ा किया। अगस्त, 1956 में लेखक का महरोली प्रवास की अवधि में एस.पी. मूलसिंह शेखावत से प्रथम परिचय हुआ। कुछ ही दिनों में वह परिचय मैत्री में बदल गया। अन्ततः इसी प्रगाढ़ परिचय ने लेखक को एक स्वर्णिम दिवस को सिटी पैलेस जयपुर में सन्त थानेदार से ला मिलाया।

सन्त थानेदार का सुसंग पाकर एस.पी. मूलसिंह उस कीचड़ को धोने में लगे रहे जो उनके रोम-रोम में रम गया था। कुसंग कितना भयावह होता है। पुनःस्वच्छ निर्मल बन जाना कितना कठिन काम है। एस.पी. मूलसिंह सन्त थानेदार के जीवन प्रसंग सुनाते रहते और भाव-विभोर हो उठते। लेखक ने जिज्ञासावश एक बार पूछ लिया कि एस.पी. साहब आपने उस दिन जयपुर कोतवाली के सत्संग में क्या अनुभव किया?

उस आनन्द को यादकर एस.पी. साहब भावविभोर हो उठे। थोड़े सम्भलकर कहने लगे, ''ऐसा लगा जैसे मेरे भीतर आनन्द की लहरें उठ रही हैं। मुझे समय का पता नहीं रहा। तन-मन में नशा छा गया। तख्ते पर से खड़ा होकर चलने को हुआ तो पैर डिगने लगे। जब जयपुर कोतवाल था तो एक बोतल शराब एक दिन में पी जाता था, पर कभी मेरे पैर नहीं लड़खड़ाए। एक ही दिन में उस देवता ने न जाने क्या जादू कर दिया। उस दिन से मेरी जिन्दगी ही बदल गई। रामसिंह जी साहिब की कृपा से मुझे नौहरेवाले महात्माजी महाराज[1] की शरण मिल गई। मेरा जीवन सुधर गया। शराब से सदा के लिए पीछा छूट गया। मैं राम, राम में लग गया।''

ईमानदारी की पराकाष्ठा

एक बार थानेदार रामसिंह जयपुर से रींगस जा रहे थे। जयपुर रेलवे स्टेशन पर पैर रखा ही था कि गाड़ी ने सीटी दे दी। लपककर गाड़ी तो पकड़ ली, पर पास में टिकिट नहीं था। चौमू-सामोद रेलवे स्टेशन पर आप टी.टी. से मिले। आपने टी.टी.आई. से कहा कि मेरे जयपुर टिकिट हाथ नहीं लगा। आप जयपुर से रींगस तक का टिकट बना दें और चाहें तो कायदे के अनुसार डबल चार्ज कर लें।

टी. टी. आई. ने कहा कि साहब आप गाड़ी में बैठिये सब हो जायेगा। जब गाड़ी रींगस जंक्शन पर पहुँची तो आप पुनः टी.टी. आई. से मिले। यह उस समय की घटना है जब आपका यश चारों ओर फैल चुका था। लोग आपको महात्मा थानेदार के नाम से जानते थे, कोई देवता थानेदार कहता। आपकी मानवता, आदर्शवादिता और ईमानदारी की बातें समाज में चर्चा का विषय बन गयी थीं। टी.टी.आई. आपको भली प्रकार जानता था। एक आदर्श मानव के रूप में आपका सम्मान करता था। बहुत आग्रह करने पर भी वह टिकिट बनाने को राजी नहीं हुआ। उसने हाथ जोड़कर निवेदन किया कि थानेदार साहब आप मुझे माफ कीजिए। आप पधारिये। आखिर आप खाटूश्यामजी चले आये। उन दिनों आप खाटूश्यामजी थानेदार थे।

---

1. महात्मा डॉ. श्री कृष्णस्वरूप साहिब, जयपुर

थोड़े दिन बाद फिर जयपुर जाने का काम पड़ा। खादूश्यामजी से आप रींगस आये। रींगस स्टेशन पर आपने शुतुरसवार को जयपुर के दो टिकिट लाने को कहा। शुतुरसवार इस असमंजस में था कि दूसरा टिकट क्यों मंगाया है। आपने एक टिकट को सम्भालकर अपनी जेब में रख लिया और दूसरे को वहीं फाड़कर फेंक दिया। पास खड़े एक परिचित व्यक्ति ने पूछा कि थानेदार साहब आपने यह क्या किया तो आप मुस्काये और कहने लगे, ''रेलवे का पैसा रेलवे को चुका दिया।''

इन्साफ की डगर पर

एक बार कृषि भूमि के किसी विवाद को लेकर खादूश्यामजी में झगड़ा हो गया। ठिकाना खादू के आदमियों ने एक किसान परिवार के साथ मारपीट की। किसान फरियाद लेकर थाने में हाज़िर हुए। सूचना मिलते ही थानेदार रामसिंह स्वयं घटनास्थल पर पहुँचे। मौका मुआयना किया। तहकीकात आरम्भ हो गई।

जब यह सब सुना तो ठाकुर साहब ठिकाना खादू ने थानेदार साहब के पास अपने कामदार को भेजा। मामले को रफा-दफा करने की बात कही। थानेदार साहब के पिताजी के साथ अपने पिताजी के मधुर सम्बन्धों की दुहाई दी।

थानेदार रामसिंह ने बड़े धीरज के साथ कामदार की बातें सुनी और कहने लगे, ''मैं मानता हूँ मेरे पिताजी के और ठाकुर साहब के पिताजी साहब के बहुत मुलाकात थी। पर इस समय मैं बड़े राज (जयपुर स्टेट) का अन्न खाता हूँ। मेरा काम रियाया में अमन चैन बनाये रखना है। मुझसे यह कतई उम्मीद मत करना कि मैं इन्साफ से आँख मूँद लूँगा।''

कामदार थोड़े समय बाद फिर लौटकर आया और कहने लगा, ''ठाकुर साहब ने कहलवाया है कि थानेदार साहब के शायद बात समझ में नहीं आयी। या तो वे यहाँ गढ़ में पधार आयें, वे कहें तो मैं थाने में हाज़िर हो जाऊँ।''

थानेदार साहब ने उत्तर दिया, ''मेरे सारी बात समझ में आ रही है, फिर भी कोई बात पूछनी होगी तो गढ़ में हाज़िर होकर ठाकुर साहब से पूछ लूँगा। कुसूर आपके आदमियों का है। कुँए पर पहुँचकर आपके आदमियों ने मारपीट की है। अतः आपके खिलाफ मुकदमा बनेगा। चाहें तो किसी दूसरे ऑफीसर के नाम तहकीकात का हुक्म करा लें।''

अन्ततः वे किसी दूसरे पुलिस अधिकारी के नाम आदेश करा लाये।

दो टूक उत्तर

शेखावटी में मंडावा का पुराना पुलिस थाना है। भाटी रामसिंह जिन दिनों मंडावा थानेदार थे, जयपुर में हकीकत राय पुलिस अधीक्षक के पद पर आसीन थे। बिसाऊ के किसी सम्पन्न सेठ से एस.पी. हकीकत राय की पूरी मुलाकात थी। जब कभी उधर जाना होता तो इस सेठ के यहां ठहरा करते थे।

एक बार एस.पी. हकीकत राय ने थानेदार रामसिंह से कहा कि आपके हल्के में बिसाऊ पड़ता है। उन अमुक सेठजी से मिलने जाते हो या नहीं, इस बार बिसाऊ आओ तो मिलने जाना। दूसरी बार एस.पी. साहब पुलिस थाना मंडावा का निरीक्षण करने आये। वही बात फिर दोहरायी। इस पर थानेदार रामसिंह ने जवाब दिया, ''साहब! मुझे कौनसा काम है जो सेठजी से मिलने जाऊँ, यदि बिना काम मिलने जाऊँगा तो सेठजी समझेंगे थानेदार मेरी गरज़ करता है। फिर मेरे जाने से लोग देखेंगे कि सेठजी के पास थानेदार आता है तो लोग सेठजी से ज़्यादा डरेंगे। मेरे मिलने से आम रियाया (जन सामान्य) को नुकसान पहुँचेगा, इससे तो न मिलना ही अच्छा है।''

यह जवाब सुनकर एस.पी. साहब चुप हो गये।

पुलिस थानेदार की बुलन्दी

शेखावत राजपूतों में नवलगढ़ ठाकुर मदनसिंह अपने समय के एक प्रभावशाली सामन्त माने जाते थे। कहते हैं उन्हीं दिनों नवलगढ़ में एक पड़त भू-भाग को लेकर विवाद खड़ा हो गया। वह एक जोहड़ और बीड़ था (तालाब और चारागाह) जिसे ठिकाना अपनी निजी सम्पत्ति मानता था, जबकि नवलगढ़ की जनता उसे गोचर भूमि मानती थी। यह विवाद इतना तूल पकड़ गया कि शान्ति और व्यवस्था भंग होने की आशंका बन गई। पुलिस हस्तक्षेप आवश्यक हो गया।

संयोग की बात कि उन्हीं दिनों भाटी रामसिंह नवलगढ़ में थाना प्रभारी बनकर आये। उन दिनों शेखावाटी के पुलिस अधीक्षक एक राजपूत थे। थानेदार भी राजपूत आ गया। इससे ठिकाना नवलगढ़ के आदमियों में खुशी छा गई। बीड़ संबंधी विवाद चल ही रहा था। ठिकाना उस भू-भाग को अपने अधिकार क्षेत्र में रखना चाहता था। एस.पी. राणा और नवलगढ़ ठाकुर के परस्पर मधुर संबंध थे।

इधर जनता को शीघ्र ही पता लग गया कि नया थानेदार ईमानदार और सच्चा आदमी है। वह पैसे अथवा प्रभाव के बल पर झुकनेवाला नहीं है। नवलगढ़ की यह घटना शेखावाटी में चारों ओर चर्चा का विषय बन गई। ठाकुर नवलगढ़ एक व्यवहारकुशल सामन्त थे। वे भाले से बाटी सेकना चाहते थे। उन्होंने नये थानेदार को अपने प्रभाव क्षेत्र में लेने का हर संभव प्रयास किया, किन्तु वह दुबला-पतला थानेदार बहुत भारी पड़ रहा था।

एक दिन एस.पी. राणा थाना नवलगढ़ का दौरा करने आये। संध्या को थानेदार रामसिंह को साथ लेकर हवाखोरी को निकले। घूमते-फिरते कोठी रूपनिवास पहुँच गये। राणा कहने लगे, "आइए थानेदार साहब, ठाकुर साहब से मिलते चलें।" थानेदार ने स्पष्ट उत्तर दिया कि साहब आप मिल आइए, मैं बाहर बैठा हूँ। आखिर एस.पी. राणा अकेले ही भीतर गये। काफी समय तक बातें होती रहीं। इस बीच थानेदार साहब के लिए कोठी रूपनिवास में से शर्बत का गिलास आया। थानेदार ने

पीने से मना कर दिया और कह दिया कि मैं इसके लिए माफी चाहता हूँ। ठाकुर नवलगढ़ ने एस.पी. राणा से आग्रह किया कि आप थानेदार को समझाइए कि कम से कम हमारी खिलाफत न करे।

एस.पी. साहब कहने लगे, ''ठाकुर साहब! थानेदार भाटी उसूलों का आदमी है। इसका झुक पाना मुश्किल है। मैं क्या समझाऊं, खुद हरिसिंह लाडखानी (जयपुर स्टेट के विख्यात पुलिस महानिरीक्षक) आ जायें तो भी यह मानने वाला नहीं है।''

थाना नवलगढ़ में एक बार ऐसी ही घटना घटी। सन्त थानेदार किसी केस में तफ्तीश करके लौटे। एस.पी. शेखावाटी उक्त तफ्तीश में थोड़ा परिवर्तन चाहते थे। थानेदार रामसिंह ने साफ जवाब दे दिया कि साहब बहादुर मैंने तो जो सत्य था वह लिख दिया। आप आला ऑफीसर हैं, आप चाहें तो भले ही कर दें, रामसिंह तो ऐसा काम करेगा नहीं।

हुजूर के खिलाफ रपट

महात्मा गांधी की डांडी यात्रा और नमक सत्याग्रह के फलस्वरूप समूचे देश में चेतना की एक नई लहर फैल गई थी। राजस्थान की देशी रियासतें भी इससे अछूती नहीं रही। राजस्थान में इन्हीं दिनों प्रजामण्डल की स्थापना हुई, जिसने आगे चलकर जन-आन्दोलन का रूप धारण कर लिया।

एक बार प्रजामण्डल से प्रेरित होकर ऐसा ही कोई आन्दोलन गीजगढ़ ठिकाने में चला, जिसमें व्यापारी वर्ग अग्रणी था। तत्कालीन जयपुर राज्य में गीजगढ़, चांपावत राठौड़ों का बड़ा ठिकाना था। गीजगढ़ ठाकुर उन दिनों जयपुर स्टेट कौन्सिल के मेम्बर थे और जयपुर राज्य के प्रभावशाली सामन्तों में उनकी गणना की जाती थी। वे नहीं चाहते थे कि उनके यहाँ कोई इस प्रकार का आन्दोलन हो। इसे दबाने के लिए ठाकुर गीजगढ़ ने यंग साहब से परामर्श किया। एफ.एस. यंग एक अंग्रेज अधिकारी थे, जो जयपुर स्टेट में महानिरीक्षक पुलिस के पद पर आसीन थे।

यंग साहब ने चतुराई से काम लिया। सादा कपड़ों में कुछ लोग गीजगढ़ पहुँचे। इन लोगों ने डंडे के जोर से व्यापारियों का मुँह बन्द करना चाहा। लोगों को डराया-धमकाया और बल प्रयोग किया। इसी आवेश में उनके मुखिया के मुख से यह निकल गया कि हम यंग साहब के आदमी हैं, तुमको सीधा कर देंगे।

आखिर सताये हुए लोगों ने पुलिस थाने में पुकार मचायी। दैवयोग से भाटी रामसिंह थाना प्रभारी थे। वे पुलिस बल लेकर तत्काल गीजगढ़ पहुँचे। वहां जाने पर पता लगा कि जान-माल का नुकसान नहीं हुआ, मारपीट हुई है। मारपीट करने वाले तब तक फरार हो चुके थे।

थानेदार रामसिंह ने केस दर्ज किया। मामले की तहकीकात की, और बयान कलमबन्द किए। बयानों में यह स्पष्ट उल्लेख आया कि उन डंडाधारी हमलावरों का मुखिया, जिसने कुल्लेदार साफा बाँध रखा था और दिखने में पंजाबी मालूम होता था, कह रहा था कि हम यंग साहब के आदमी हैं। थानेदार भाटी रामसिंह ने बयानों को ज्यों का त्यों लिख लिया और रोजनामचे में एफ.आई.आर. दर्ज कर दी।

क्षेत्र के पुलिस अधिकारी को जब इस रपट का पता लगा तो रोजनामचा अपने कब्जे में ले लिया और कहने लगा, "थानेदार साहब! आपने यंग साहब के खिलाफ रोजनामचा रंगा है, अब आपकी महात्माई चौड़े आ जाएगी।" इस पर थानेदार रामसिंह ने उत्तर दिया, "मैंने अपना फर्ज़ अदा किया है। अपनी ओर से कोई बात नहीं लिखी है।"

अपनी वफादारी दिखाने के लिए वह डिप्टी रोजनामचा लेकर तुरन्त जयपुर पहुँचा। उस समय काशीप्रसाद तिवाड़ी जयपुर के पुलिस अधीक्षक थे। वह अधिकारी एस.पी. के सामने हाज़िर नहीं हुआ और रोजनामचा लेकर सीधा ही जलेब चौक आई.जी.पी. यंग साहब के पास पहुँच गया। अवसर पाकर रोजनामचा पुलिस महानिरीक्षक के समक्ष रख दिया और अर्ज़ किया, "यह पुलिस थाना बस्सी का रोजनामचा है, इसमें थानेदार रामसिंह ने हुजूर के खिलाफ रपट दर्ज करली।" यंग साहब सब काम छोड़कर चौकन्ने हुये और रिपोर्ट सुनाने को कहा।

डिप्टी मियाँ मन ही मन प्रसन्न हो रहा था। उसने रिपोर्ट सुनाना आरम्भ किया। यंग साहब ने रोजनामचा ध्यान से सुना। जब सुन चुके तो दोनों हाथ फैलाकर कुर्सी की पीठ पर लुढ़ककर दिल खोलकर हँसे। फिर रोजनामचा लाने वाले पुलिस ऑफीसर से कहने लगे, "रामसिंह एक ईमानदार थानेदार है। ऐसी रपट लिख सकता है, तुम लोग नहीं लिख सकता, तुम लोग मैला (भिष्टा) खाता है।"

यशोज्ज्वल चरित्र

अपनी सच्चाई और ईमानदारी के कारण थानेदार रामसिंह का नाम दूर-दूर तक फैल गया था। प्रायः उनके उज्ज्वल चरित्र की बातें इधर-उधर चला करती थीं। लोग कहते रिश्वत लेना तो दूर रहा थानेदार रामसिंह प्याऊ पर मुफ्त में पानी भी नहीं पीता। प्याऊ वाले को पैसा देता है, तब पानी की बून्द गले उतरती है। इस सन्त थानेदार का सात्त्विक व्यवहार समाज में श्रद्धा और सम्मान का विषय बन गया था।

एक बार थानेदार रामसिंह अपने सबसे छोटे पुत्र विष्णु के साथ रेलगाड़ी से जयपुर आ रहे थे। सालगरामपुरा के ठाकुर केसरीसिंह चांपावत,संयोगवश थानेदार साहब के साथ यात्रा कर रहे थे, जो थानेदार के धर्मभाई थे और थानेदार साहब को दादाभाईसा कहकर सम्बोधित करते थे। सीकर रेलवे स्टेशन पर एक सहयात्री ने मूंगफली ली। पास में बैठे बालक को वह मूंगफली देने लगा, किन्तु बच्चे ने मूंगफली लेने को हाथ नहीं बढ़ाया। सहयात्री ने बहुत आग्रह किया, पर बच्चा टस से मस नहीं हो रहा था। इस पर वह यात्री कह उठा "तू भी क्ये थानेदार रामसिंह ही हुगो ज्यो ले ही कोनी।" यह सुनते ही ठाकुर केसरीसिंह को हँसी आ गई। थानेदार साहब को सम्बोधित कर वे कहने लगे, "दादाभाईसा सुणो छोक सेठजी काँई कँह रहा छै।" थानेदार भाटी रामसिंह मन ही मन मुस्कराए। ठाकुर केसरीसिंह से रहा नहीं गया। सहयात्री से संभाषण आरंभ हुआ। कहने लगे, "सेठजी आपने रामसिंहजी थानेदार का नाम ही सुना है, कभी देखा भी है।" यात्री ने उत्तर दिया, कि मैं तो आकोला (महाराष्ट्र) रहता हूँ। मैंने तो नाम ही

सुना है, कभी दर्शन नहीं किए। इस पर ठाकुर केसरीसिंह मुस्कराये और बोले, ''लो आज आपको दर्शन करा देते हैं। जिनका आपने नाम सुन रखा है, वे आपके सामने बैठे हैं, यही रामसिंह जी थानेदार हैं और यह बच्चा इन्हीं का पुत्र है।'' यह सुनकर सेठ श्रद्धानत हो गया और हाथ जोड़कर कहने लगा कि आज तो खूब दर्शन हुया।

खरी कमाई में बरकत

थानेदार भाटी रामसिंह जब कभी दौरे पर जाते तो किसी के यहाँ खाना नहीं खाते। अपने हाथ से ही भोजन पकाते। किसी सिपाही से भोजन नहीं बनवाते। यदि समय नहीं मिलता तो पानी पीकर ही रह जाते। कहीं कोई अधिक आग्रह करता तो उसे साफ कह देते कि मैं तो अपने हाथ का बनाया भोजन करूँगा। आप बताया करते थे कि मैंने डिप्टी साहब कुशलसिंह और एस.पी. साहब मूलसिंहजी के अतिरिक्त कभी किसी पुलिसवाले के यहाँ खाना नहीं खाया। डिप्टी कुशलसिंह तो पुलिस में आये तब से ही बहुत ईमानदार और खरी कमाई का खाने वाले थे। एस.पी. मूलसिंहजी ने सत्संग में शामिल होने के बाद रिश्वत लेना छोड़ दिया था। इसी लिहाज से उनके यहाँ खाना खा लेता था। मैं अकेला ही नहीं पुलिस में ऐसे और भी हुए हैं, जो खरी कमाई का खाते थे, क्योंकि खरी कमाई में ही बरकत है। कोतवाल असरफ अली साहिब अपने सगे भाई के यहाँ खाना नहीं खाते थे, क्योंकि उनका भाई रिश्वत लेता था।

सिटी पैलेस जयपुर में जिस समय यह प्रसंग चल रहा था; किसी ने पूछा कि मैंने सुना है कि आप तो किसी का प्रकाश भी काम में नहीं लेते थे। इस पर आप कहने लगे, ''ऐसी बात नहीं है, पर एक बार ऐसी ही बात बन गई। मैं किसी केस में तफ्तीश करने गया था। रात हो गई। उजाला था नहीं, एक बनिये से कहकर उसके घर से लालटेन मंगवाई। लालटेन के प्रकाश में मैंने बयान लिये। लालटेनवाले को तेल का एक आना दे दिया था।''

चौअन्नी की महिमा

जिन दिनों यातायात की सुविधा नहीं थी, आवागमन के आधुनिक साधन नहीं थे, लोग प्रायः पद-यात्रा करते थे। गिने-चुने लोग ऊँट की पीठ पर बैठकर चलते थे। राजस्थान की मरुभूमि में सवारी के नाम पर ऊँट ही सुलभ था। किसान का तो आधार ही ऊँट था। उधर सम्पन्न व्यक्ति सवारी के लिए ऊँट रखते थे। ऐसा ही एक सजा-सजाया ऊँट रेलवे स्टेशन नवलगढ़ के बाहर खड़ा था। यह ऊँट नवलगढ़ के सबसे बड़े सेठ राजा रामदेव पोद्दार का था। जयपुर से आने वाले किसी मेहमान के आगमन की प्रतीक्षा थी। गाड़ी आयी पर मेहमान नहीं आया।

संयोगवश थानेदार रामसिंह उसी गाड़ी से उतरे। सन्त थानेदार अपने सेवाकाल में दो बार पुलिस थाना नवलगढ़ में थानेदार रहे। यह प्रसंग उस समय का है जब पहली बार नवलगढ़ में थानेदार रहे। जैसे ही थानेदार स्टेशन के बाहर आये ऊँटवान ने उन्हें देख लिया। वह उन्हें रेलवे स्टेशन से पुलिस थाने तक ऊँट पर बैठा लाया। ऊँट से उतरकर थानेदार ने ऊँटवान को धन्यवाद दिया और कहा, ''आपका ऊँट अच्छा चलता है। पालणा ही है। खूब आराम से लाये।'' यह कहकर थानेदार साहब ने चौअन्नी जेब से निकाली और ऊँटवान की ओर हाथ बढ़ाया। ऊँटवान बड़े संकोच में पड़ गया। क्योंकि वह ऊँट नवलगढ़ के उस युग के करोड़पति सेठ का था। कभी किराये पर नहीं चलता था। भला वह किराया कैसे लेता। ऊँटवान ने बड़ा अनुनय-विनय किया। कहने लगा, ''ऊँट सेठां को है। राजा रामदेवजी पोद्दार को'' पर थानेदार कब मानने वाला था। ऊँटवान की हथेली पर चार आने रख ही दिए।

जब ऊँट हवेली पहुँचा तो ऊँटवान ने बताया, ''सेठां, आज तो आपणो ऊँट कमाई कर ल्यायो।'' सारी बात कह सुनाई और साथ में वह चांदी की चौअन्नी सेठजी को सौंप दी। सेठ पोद्दार ने चौअन्नी को निरखा-परखा, मन ही मन मुस्कराये, चौअन्नी को संभालकर तिजोरी में रख लिया और

ऊँटवान से कहने लगे, ''आ थाणादार रामसिंहजी का हाथ की चौअन्नी है, आपणै बहुत काम आसी।''

ऐसा ही एक प्रसंग सिटी पैलेस में सन्त थानेदार के श्रीमुख से सुनने को मिला। एक सत्संगी ने अपनी डायरी में उसे लिपिबद्ध कर लिया। थानेदार साहब के शब्दों में वह इस प्रकार है-

''एक बार जब मैं नवलगढ़ थानेदार था, किसी प्राइवेट बस में बैठकर नवलगढ़ से झुंझुनूं गया। अन्य सवारियों के साथ ही मैं बस वाले को भाड़ा देने लगा। वह भाड़ा लेने से बिल्कुल इन्कार हो गया। इस पर मैंने उससे कहा कि या तो भाड़ा लो वरना मुझे वापस नवलगढ़ छोड़ कर आओ। आखिर उसने भाड़ा ले लिया। यह बात आई.जी.पी. यंग साहब तक पहुँच गई। उन्होंने भी इसका एक बार मुझसे जिक्र किया था।''

कर्त्तव्यनिष्ठा

एक बार भारत के वायसराय का रेलमार्ग से जयपुर से दिल्ली जाने का कार्यक्रम था। जयपुर राज्य की सीमा में रेल मार्ग के दोनों ओर स्टेट पुलिस की सुरक्षा गारद लगाई गई। थानेदार रामसिंह एक सीमित क्षेत्र में गारद के प्रभारी नियुक्त किए गये। ड्यूटी पर चढ़ने के बाद संयोगवश थानेदार रामसिंह भाटी को मलेरिया ज्वर ने आ घेरा। शरीर काँपने लगा। साथ ही तीव्र ज्वर हो आया, किन्तु सन्त थानेदार शान्त भाव से अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहे।

वायसराय की स्पेशल ट्रेन सकुशल निकल जाने पर वे दौसा थाने में दलबल सहित लौट आये। थानेदार रामसिंह के स्नेही मित्र एस.पी. मूलसिंह शेखावत वहीं थाने पर व्यवस्था सम्भाल रहे थे। थानेदार रामसिंह की वाणी सुनकर और उनके चेहरे की ओर देखकर वे ताड़ गये कि थानेदार रामसिंह ज्वर से पीड़ित हैं। हाथ लगाकर देखा तो तीव्र ज्वर हो रहा था। एस.पी. मूलसिंह ने कहा, ''आपको इतना तेज बुखार हो रहा है।''

थानेदार रामसिंह शान्त भाव से बोले, ''हाँ साहब! इस शरीर को बुखार हो आया।''

एस.पी. मूलसिंह शेखावत ने उपालम्भ के स्वर में कहा, ''आप बुखार में तप रहे हो और आपने किसी जवान के हाथ थाने में इत्तला तक नहीं की। इत्तला आती तो आपकी जगह किसी दूसरे थानेदार को भेज देते।''

थानेदार रामसिंह कहने लगे, ''साहब! मैं अपने खातिर दूसरों को क्यों परेशान करता।'' सन्त थानेदार की चढ़ी बुखार में ड्यूटी पर खड़े रहने की बात पुलिस के उच्चाधिकारियों तक पहुँच गई। एस.आई. रामसिंह को उत्तम सेवा के लिए इस आशय का प्रमाण-पत्र मिला। यह प्रमाण-पत्र उनकी पुरानी फाइल में लगा हुआ है।

थानेदार रामसिंह ने सुरक्षा गारद में खड़े रहकर जितना भारत के वायसराय का ध्यान रखा, वैसा ही अवसर आने पर जन-सामान्य का ध्यान रखते। एक गरीब की पुकार पर उन्होंने जिस कर्त्तव्यनिष्ठा और जागरूकता का परिचय दिया वह, मानवता का एक मापदण्ड है। एक पुराने परिचित सज्जन ने इस आशय का एक सुखद प्रसंग सिटी पैलेस में सुनाया। जयपुर निवासी वह सज्जन सन् 1941 में सांभर में तहसीलदार थे। उन दिनों भाटी रामसिंह फुलेरा में थानेदार थे।

सन्त थानेदार के साधु स्वभाव, सत्यवादिता, सेवा भाव और स्नेह-सिक्त व्यवहार से तहसीलदार बड़े प्रभावित थे। वह उन्हें अन्तर्मन से स्नेह करते और जब कभी अवसर मिलता थानेदार रामसिंह का सत्संग लाभ उठाने फुलेरा थाने में चले आते। थानेदार रामसिंह तो प्रेम की प्रतिमा थे, जो उनके सम्पर्क में आता उसे प्रेम प्रसाद मिल जाता।

अवकाश का दिन था, उस दिन दोपहर में थानेदार साहब की याद आते ही तहसीलदार सांभर से फुलेरा चले आये। थानेदार साहब उस समय भोजन बना रहे थे। तहसीलदार पास में बैठे बातें करते रहे। जब भोजन बना चुके तो अपने लिए भोजन परोसा। जैसे ही भोजन करने बैठे एक गरीब आदमी थाने में आया। थानेदार रामसिंह का आदेश था

कि थाने में कोई भी आदमी किसी भी समय फरयाद लेकर आये, उसे सीधा मेरे पास भेज दो। थाने के संतरी ने फरयादी को सीधा थानेदार साहब के पास भेज दिया।

वह ग्रामीण हाथ जोड़कर थानेदार साहब से कहने लगा कि मैं धोती ओढ़कर मुसाफिर खाने में लेट रहा था, मेरी आँख लग गई, कोई धोती उठा ले गया। थानेदार ने मीठी नज़र से उस गरीब की ओर निहारा, भोजन की थाली एक ओर सरका दी। सीधे उस आदमी के साथ मुसाफिरखाना की राह ली। उन दिनों फुलेरा इतना फैला हुआ नहीं था। रेलवे स्टेशन और बाजार के बीच एक छोटा-सा मुसाफिरखाना था, जिसमें गिनती के यात्री आते। यह देखने के लिए कि अब क्या होता है, तहसीलदार भी साथ हो लिए। थानेदार ने इस संगीन चोरी का मौका मुआयना किया। मुसाफिरखाने में खड़े होकर इधर-उधर देखा और एक आदमी का हाथ पकड़कर कहा, ''रामजी, इस गरीब की धोती दे दो। तुम पराई धोती का क्या करोगे।'' उस आदमी ने थानेदारजी के मुख की ओर देखा और बिना बोले ही अपनी पोटली में से धोती निकालकर दे दी।

सर गोपीनाथ पुरोहित के दत्तक पुत्र द्वारकानाथ पुरोहित स्टेट पुलिस में बड़े अधिकारी थे, जो उपमहानिरीक्षक पुलिस के पद पर रहे। थानेदार रामसिंह के लिए वे कहा करते थे कि पुलिस विभाग में मैंने ऐसा ईमानदार और कर्त्तव्यपरायण थानेदार नहीं देखा। वे एक प्रसंग सुनाया करते थे—

किसी अंग्रेज मेहमान के साथ जयपुर के महाराजा मानसिंह जयपुर से सवाईमाधोपुर जा रहे थे। शिकारखाने के अधिकारी कर्नल केसरीसिंह साथ में थे। भाटी रामसिंह उन दिनों पुलिस थाना सवाईमाधोपुर में सेवारत थे। स्पेशल कोच सवाईमाधोपुर रेलवे स्टेशन पहुँचा, उससे पूर्व अचानक तेज वर्षा आरम्भ हो गई। रेलवे स्टेशन पर पुलिस का इन्तज़ाम था। पुलिस के जवान वर्षा से बचने के लिए इधर-उधर हो गये, किन्तु थानेदार रामसिंह तेज वर्षा में

वहीं प्लेटफॉर्म पर खड़े रहे। इतने में कोच स्टेशन के सामने पहुँच गया। महाराजा मानसिंह ने देखा कि एक थानेदार सामने खड़ा भीग रहा है। दरबार ने कर्नल केसरीसिंह से पूछा, ''यह कौन थानेदार है?''

केसरीसिंह ने बताया कि यह भाटी रामसिंह है। सवाई मानसिंह बोले, ''हमने इस थानेदार को जैसा सुना वैसा ही पाया।''

साहसिक कदम

भाटी रामसिंह ने थानेदार के पद पर सर्वाधिक सेवा पुलिस थाना नवलगढ़ में रहकर दी। नवलगढ़ के पुराने लोग आज भी थानेदार रामसिंह को याद करते हैं। सन्त रामसिंह के पुलिस सेवा के अनेक संस्मरण नवलगढ़ से जुड़े हुए हैं। प्रथम बार जब सन् 1933 में नवलगढ़ आये तो उनके सत्कर्मों की सुगन्ध चारों ओर फैल गई। जनता के आग्रह पर उन्हें सन् 1940 में फिर नवलगढ़ भेजा गया।

शेखावाटी में उन दिनों चोर-डाकू बड़े सक्रिय हो रहे थे। नवलगढ़ में आये दिन चोरियाँ हो रही थीं। शेखावाटी में डाकुओं का शक्तिशाली गिरोह खड़ा हो गया था जो राजस्थान में दूर-दूर तक डाके डालता था। भोड़की निवासी अर्जुन नामक डाकू का बड़ा आतंक छाया हुआ था। वह वेष बदलकर दूर-दूर तक डाके डालता। पुलिस के वश में नहीं आ रहा था। जयपुर राज्य की ओर से उसे जीवित या मृतक जैसे भी हाथ आये पकड़ने के आदेश थे। भोड़की ग्राम नवलगढ़ थाने के सीमा क्षेत्र में था। भाटी रामसिंह नवलगढ़ थाना प्रभारी बनकर आये। सन्त रामसिंह के आगमन के साथ ही चोरियाँ तो कम हो गई किन्तु डाकू अर्जुन और कालू उसी प्रकार उत्पात मचाते रहे। डाकुओं का मुकाबला करने के लिए रामसिंह ने अतिरिक्त पुलिस बल बुला लिया।

किसी ने थाना नवलगढ़ में देर रात यह सूचना दी कि अर्जुन धाड़ैती (डाकू) भोड़की आया हुआ है। सूचना मिलते ही थानेदार रामसिंह पुलिस बल लेकर भोड़की की ओर बढ़ गये। ढलती रात में गाँव को आ घेरा। प्रातः होते ही डाकू के अन्य साथी पकड़ में आ गये, किन्तु अर्जुन हाथ नहीं लगा। अर्जुन बड़ा चतुर और साहसी डाकू था। वह घबराया नहीं, उसने तिलक छापे लगाये, ब्राह्मण पुजारी का वेष धारण किया और थानेदार भाटी रामसिंह के सामने से बचकर निकल गया। वह धीरज के साथ थानेदार साहब के सामने आया और एक ब्राह्मण की भांति हाथ उठाकर भाटी रामसिंह को आशीर्वाद दिया और चलता बना।

थानेदार रामसिंह को जब इस बात का पता लगा तो मन में एक पछतावा रह गया। उन्होंने ग्रामवासियों से कहा, "मैंने अर्जुन धाड़ैती को देख लिया है, अब जहाँ कहीं मिल जाएगा गोली मार दूँगा।"

अर्जुन जानता था कि थानेदार रामसिंह ज़ुबान का पक्का है, जो कहता है कर दिखायेगा। इस भय से उसने स्वयं जयपुर जाकर पुलिस महानिरीक्षक एफ.एस. यंग के समक्ष आत्म-समर्पण कर दिया। उक्त सफल अभियान की सूचना पाकर पुलिस महानिरीक्षक ने बधाई-तार भेजा।[1]

---

1. Copy of telegram dated the 7th march, 1941 from the Inspector General of Police Jaipur State, Jaipur to the Superintendent of Police, Sheikhawati.

   Congratulations self and subordinates. Jaipol

   No. 882

   Dated Jhunjhunu, the 12th March, 1941

   Copy forwarded to the S.I. Ram Singh with the remark that the undersigned expresses his sense of appreciation for the good work done by him in connection with the raid on the absentee Minas and dacoits of Bhoorki on the 5/6th March, 1941.

   Superintendent of Police

   Sheikhawati

सत पर सांई खड़ा है

उन्हीं दिनों शेखावाटी का एक दूसरा डाकू पुलिस के हाथ नहीं आ रहा था। वह बीकानेर राज्य में डाके डालता और शेखावाटी में लोहार्गल की पर्वत श्रेणियों में आकर छिप जाता। उसने ऐसा आतंक फैलाया कि उस पर कोई पुलिस अधिकारी हाथ डालने का साहस ही नहीं कर पा रहा था। वह कहा करता था कि जब मैं पकड़ा जाऊँगा तो बहुत से पुलिसवालों की पत्नियाँ रांडे हो जाएंगी (वैधव्य वेष धारण कर लेंगी)। मैं ऐसे थोड़ा ही हाथ आऊँगा। छाबड़े (बड़ी टोकरी) में डालकर ले जाएंगे। यानी जब तक बोटी-बोटी नहीं बिखर जाएगी तब तक हाथ दिखाऊँगा।

वह यदा-कदा ही अपने घर आया करता था। देर रात उसके आगमन की पुलिस थाना नवलगढ़ में सूचना मिली। थानेदार रामसिंह आधी रात को थाना नवलगढ़ से तीन ऊँट और चार सिपाही साथ लेकर दबिस पर निकल पड़े।

चाँद निकल आया था। ऊँट अपनी गति से सूने मार्ग पर बढ़ रहे थे। इतने में सामने किसी खेजड़ी पर बैठी कोचर पक्षी की चिल्लाहट सुनाई दी, जैसे पत्थर में करोत चल रही हो। एक सिपाही जो आयु में बड़ा था शकुन जानता था, कहने लगा "थाणादार साब, कोचरी खारी बोली। खून बिखर सी।"

यह सुनकर साथी सिपाहियों के दिलों में भय व्याप्त हो गया। थानेदार भाटी शान्त रहे। फिर कहने लगे, "हिम्मत रखो। गुरु भगवान मदद करेंगे। और हुआ भी वही, खून तो बिखरा पर पुलिसवालों का बाल बांका नहीं हुआ।"

डकैत घर में सो रहा था। संयोगवश पुलिस उसके दरवाजे पर ही जा धमकी। आहट पाकर वह बाहर निकला ही था कि उस पर लाठी के दो प्रहार हुए। वह जमीन पर पसर गया, गाय-गाय चिल्लाने लगा।

उसे पकड़कर, जकड़कर और ऊँट की पीठ पर बाँध कर तुरन्त थाने ले आये।

दूसरे दिन यह खबर चारों ओर फैल गई। लोग धाड़ैती को देखने थाने पर जमा होने लगे। किसी को विश्वास ही नहीं हो रहा था कि थाने के चार सिपाही डाकू को पकड़ लाये और किसी सिपाही को चोट तक नहीं आयी। एक परिचित व्यक्ति से रहा नहीं गया। अवसर पाकर वह डाकू से पूछ बैठा, ''अरे मरद! थारा नाम सूं हिरण खोड़ा होता (तेरा नाम सुनकर पराक्रमी भी पंगु हो जाते) तनै रामसिंह जिसो दुबलो-पतलो थाणादार और चार सिपाही पकड़ ल्याया। कोई हाथ-दुहाथी नहीं करी। आछी नामरदी दिखाई। इसी क्ये गाज गिरगी (ऐसा क्या वज्रपात हो गया था।)'' डाकू ने उदास भाव से उत्तर दिया, ''क्या बताऊँ भाई, जैसे ही मैं नींद से उठकर बाहर आया तो क्या देखता हूँ पत्थर-पत्थर में सिपाही खड़े हैं। मैंने सोचा आज तो बीकानेर का गंगा रिसाला चढ़ आया। इतने में मेरी पीठ पर सैंपूर (पूरे वेग से) की लाठी पड़ी। मैं संभल ही नहीं पाया।''

वह नादान क्या जाने भुजबल से आत्मबल प्रबल है। प्रह्लाद की भांति जिन्हें अटल विश्वास है, उनकी राम रक्षा करता है। सत पर सांई खड़ा है।

भूले-बिसरे प्रसंग

थानेदार सन्त रामसिंह को उनके समकालीन लोग सन्तजी, भक्तजी अथवा महात्माजी के नाम से सम्बोधित किया करते थे। रामाश्रम-सत्संग से जुड़े सत्संगियों के मध्य वे ठाकुर साहिब के नाम से विख्यात हो गये। जयपुर ठण्डी प्याऊ के सत्संग में लोग उन्हें पूज्य ठाकुर साहिब के नाम से पुकारते। किन्तु उनका प्यारा नाम इन सब नामों से परे है। उनके अन्तरंग सत्संगी परिवारों के सदस्य उन्हें एक ही नाम से संबोधित करते हैं, वह नाम है- **'बाबासा'**। इस नाम में आत्मीयता है, अपनत्व है, सरसता है। उदाहरण के लिए डिप्टी कुशलसिंह के वंशज, डॉक्टर चंद्रगुप्त साहब का परिवार अथवा सैन भगत के बेटे-पोते **सब दाढ़ीवाले ठाकुर को 'बाबासा' कहकर पुकारते हैं। ऐसे अनेक परिवार हैं जो बाबासा को देवता की भांति पूजते हैं, प्रसाद चढ़ाते हैं, राम समाधि मन्दिर पर सिर टेकने आते हैं, अपने परिवार का सम्मानीय सदस्य मानते हैं और जब कोई काम अटकता है तो बाबासा से अर्ज करते हैं। बाबासा उनके सुख-दुःख के सीरी (सहयोगी) हैं। इन सबने अन्तर्मन से इस प्यार भरे सम्बोधन को अपना लिया है। बाबासा को अपना बना लिया है।**

बाबासा की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वे जीवनपर्यन्त छिपे रहे। सब कुछ जानकर भी अनजान बने रहे। ठण्डी प्याऊ के सत्संग के मधुर प्रसंग इसके साक्षी हैं। सत्संग में वे सबसे पीछे बैठते, विनीत भाव से सबके हाथ जोड़ते। उनकी उच्चावस्था को देख श्रद्धावश जब कोई सत्संगी साधना का प्रसंग चलाकर कुछ पूछ बैठता तो बाबासा सदा एक ही उत्तर देते, ''मैं कुछ नहीं जानता।'' सांगानेर के सन्त रज्जब साहिब की एक साखी है-

रज्जब तब सब जाणिया, जाणर भया अजाण।
मनसा वाचा कर्मणा, गुरु गोविन्द की आण॥

जिसके पास दुर्लभ सम्पदा है, वह उसे छिपाता है, जिसके पास कुछ है नहीं वह चिल्लाता है। सांगानेर का यह आधुनिक सन्त भी उसी कोटि का हुआ है। किन्तु बिरले लोग ही बाबासा को जान पाये। इन पंक्तियों का लेखक वर्षों तक उन सत्पुरुष के संपर्क में रहा पर पूरा सा उन्हें पहचान ही नहीं पाया। जो आपको पहचान पाये उनमें खेजड़े के रास्ते वाले मौलवी साहिब और सत्याश्रम हुसैनपुरा मीठड़ी के सन्त बापजी श्यामजी के नाम उल्लेखनीय हैं।

दरवेशी पर्दापोशी

मौलवी हिदायतअली साहिब इस शताब्दी में जयपुर में बहुत बड़े सूफ़ी सन्त हुए हैं। उनके अनेक शिष्य हैं। उनके पौत्र खेजड़े के रास्तेवाले मौलवी साहिब का इसी प्रकार बड़ा नाम रहा है। मुसलमान समाज में उनका बड़ा सम्मान रहा है।

एक बार भाटी रामसिंह मौलवी साहिब से मिलने उनके मकान पर गये। आपने अदब के लिहाज से अपनी जूतियाँ नीचे सीढ़ियों में ही खोल दीं। बहुत समय तक वार्तालाप चलता रहा। जब वापस आने को हुए तो मौलवी साहिब सीढ़ियों में पहले उतरे और लपककर नीचे पड़ी जूतियाँ अपने दोनों हाथों में उठा लाये और ऊपर सीढ़ियों में बाबासा के सामने रख दीं। ठाकुर रामसिंह यह दृश्य देखकर ठगे से रह गये और बोले, ''मौलवी साहिब! आपने यह क्या किया?''

मौलवी साहिब हाथ जोड़कर बड़े अदब से बोले, ''मैं तो मुसलमान हूँ। आपको एक गिलास पानी भी नहीं पिला पाया। आप एक औलिया हैं। मैं आपकी क्या खिदमत करने लायक हूँ।'' इस पर ठाकुर रामसिंह ने कृतज्ञता के साथ विनीत भाव से मुस्कराकर कहा, ''आप पानी की बात करते हैं, मुझे तो आपने अमृत पिला दिया। मेरी जूतियों के हाथ लगाकर आपने मुझे खरीद लिया है।''

यह सुनते ही मौलवी साहिब की आँखें भर आईं। यहाँ हम देखते हैं कि साधना के उच्च सोपान पर जातीय भेद समाप्त हो जाते हैं। **गत शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पवित्र सलिला गंगा के तट पर जो प्रेम प्याला महान् सूफ़ी सन्त मौलाना साहिब फ़ज़्ल अहमद खाँ ने एक हिन्दू नवयुवक रामचन्द्र को पिलाया था, एक लम्बे अन्तराल के बाद वही विशुद्ध प्रेम की धारा हिन्दू-मुसलमान के तटबन्धों को तोड़ राजस्थान की मरुभूमि में बह चली। मुसलमानों के बीच उस गोल साफेवाले हिन्दू सूफ़ी सन्त का समादर इसका जीता जागता प्रमाण है। धर्म से अनुप्राणित मानव संस्कृति का एक उज्वल आयाम है।**

जयपुर रामगंज के सूफी संत बाबा अल्लाहजिलाय साहिब के ठाकुर रामसिंह से बड़े स्नेह संबंध रहे हैं। उन दिनों हाजीबाबा बगदादी का बड़ा नाम था। हाजी बन्धु अब्दुल्ला शाह और अहमद शाह आयु में बड़े होते हुए भी ठाकुर रामसिंह को अपने से बड़ा मानते। उन्हें खड़े होकर सलाम करते। उन्हें एक औलिया के रूप में जानते-पहचानते। एक नेक इन्सान के रूप में इस निराले थानेदार की महिमा राजस्थान में दूर-दूर तक फैल गई थी, किन्तु उनकी आध्यात्मिक उच्चावस्था को बिरले ही पहचान पाये।

साचे राचे राम

द्वितीय विश्व युद्ध के समय देश में चीनी का अभाव आ गया था। युद्ध के समय जो अभाव आरम्भ हुआ वह युद्ध के बाद भी कुछ वर्षों तक उसी प्रकार बना रहा। चीनी कण्ट्रोल से मिलने लग गई थी। उन्हीं दिनों ठाकुर रामसिंह भाटी की बड़ी पुत्री दयालकंवर (सती बाईसा) का विवाह आ गया। रामसिंह भाटी के पास उस समय केवल सवामन चीनी थी। कण्ट्रोल रेट से इतनी ही चीनी मिली। वर पक्ष की ओर से बड़ी बारात आने को थी, जिसमें अनेक सामन्त (ताजीमी सरदार) सम्मिलित होने को थे।

काला बाजार में चीनी उपलब्ध थी। आसानी से खरीदी जा सकती थी। किन्तु बाबासा को यह अनुचित मार्ग स्वीकार नहीं था।

आखिर यह निर्णय लिया गया कि केवल दो मिठाई बनाई जाय। हलवाई ने मिठाई बनाना आरम्भ किया। दो मिठाई बन गई, चासनी कम नहीं हो रही थी। **जो भरी सभा में पांचाली का चीर बढ़ा सकता है, उसके लिए चासनी बढ़ाना क्या कठिन कार्य था।** ठाकुर रामसिंह भाटी के धर्मभाई सालगरामपुरा के ठाकुर केसरीसिंह चांपावत काम की सम्भाल पर थे। एक-एक कर पांच मिठाइयाँ तैयार हो गईं। विवाह का कोठ्यार मिठाइयों से भर गया। बारात का पूरा सत्कार हो गया। गांव जीम गया। चासनी फिर भी बच गई। बची हुई चासनी का विवाहोपरान्त पुनः बूरा बना लिया गया। पच्चीस सेर बूरा बैठा।

सती बाईसा को बाबासा ने कन्यादान में एक गाय दी थी। बारात प्रस्थान करने के साथ ही बाबासा गाय को खूड़ पहुँचाना चाहते थे। कन्यादान में दी गई गाय का दूध घर में काम में नहीं ले सकते थे। गाय को गाड़ी से भेजने की व्यवस्था की गई, किन्तु गाय गाड़ी में चढ़ नहीं रही थी। आखिर यह बात एक आदमी ने घर आकर बाबासा को बताई। बाबासा स्वयं गाड़ी पर गये। गऊ की पीठ पर बड़े दुलार से हाथ फेरा और गाय से निवेदन किया, ''गाय माता! तनै बाईसा नै दे दी है। बाईसा कै सासरै सिधारो।'' (बाईसा के ससुराल चली जाओ)। गाय ने बाबासा की ओर निहारा और आराम से गाड़ी में चढ़ गई।

सन्त रामसिंह भाटी जब पुलिस सेवा में थे नज़र का चश्मा लगाया करते थे। चश्मे को सदा सम्भाल कर रखते। एक बार पुलिस के किसी प्रकरण में कोर्ट में जाना हुआ। अपना चश्मा कोर्ट में कहीं भूल आये। वहाँ से थाने लौट आये। रात को ईश्वर चिन्तन के साथ ही चश्मे का ख़याल आता रहा। सुबह जब अख़बार आया तो उसे बिना चश्मे ही पढ़ने लगे। पढ़ने में कोई असुविधा नहीं हुई। जीवन में फिर कभी नज़र का चश्मा लगाने की आवश्यकता नहीं हुई। **प्रगाढ़ विश्वास और पूर्ण समर्पण के बल पर सदा के लिए दृष्टिदान मिल गया। इसे वे अपने गुरु भगवान की कृपा मानते थे।**

आदर्श महापुरुष

एक बार पश्चिम राजस्थान के निवासी एक एस. आई. पुलिस थाना सांगानेर में स्थानान्तरण होकर आये। ठाकुर रामसिंह का गांव मनोहरपुरा इसी थाना क्षेत्र में आता है। एक दिन किसी परिचित व्यक्ति ने थानेदार रामसिंह का परिचय सांगानेर के नवागत थानेदार से करा दिया और कहा, "आप भी थानेदार रह चुके हैं, आपका नाम है रामसिंह भाटी।"

रामसिंह भाटी का नाम सुनते ही नवागत थानेदार को मानों कोई निधि मिल गई। वह चरणस्पर्श करने को आगे बढ़ा। सन्त रामसिंह किसी को पैरों के हाथ नहीं लगाने देते थे। वे सहसा पीछे हटे और बोले, "थानेदार साहब! आप यह क्या कर रहे हैं।"

इस पर उस थानेदार ने बताया, "मैं तो सोच ही नहीं सकता कि आप मौजूद हैं और आपसे कभी मुलाकात होगी। आज मैं तो अपने आपको बड़ा भाग्यशाली समझता हूँ जो आपके अचानक दर्शन हो गये। मैं आपको बहुत वर्षों से जानता हूँ जब मैं जोधपुर में ट्रेनिंग में था। जब ट्रेनिंग पूरी होने को थी, जोधपुर रेंज के डी.आई.जी. हमें सम्बोधन करने आये। उन्होंने बताया कि हमारे राजस्थान में एक ऐसे थानेदार भी हुए हैं- जयपुर के रामसिंह भाटी, जो महात्मा थानेदार कहलाते हैं। भाटी ने कभी एक पैसा रिश्वत का नहीं लिया। किसी के यहाँ मुफ्त का खाना नहीं खाया, यहाँ तक कि प्याऊ पर मुफ्त का पानी भी नहीं पिया। पुलिस में ऐसे ईमानदार लोग भी रहे हैं। ईमानदार पुलिस अधिकारी ही जनता की भलाई कर सकता है।"

वह पुलिस अधिकारी बाद में भी बाबासा के पास आया करता था। एक बार सिटी पैलेस में उससे मिलना हो गया। बाबासा के प्रति उस पुलिस अधिकारी में कितना विनीत भाव था, देखते ही बनता था।

अपंग का आगमन

बगरू-महलां पास-पास में दो गाँव हैं। इन दो गाँवों में दो सत्संगी रहा करते थे। समय पाकर वे दोनों सत्संगी सन्त थानेदार के सम्पर्क में आ गये। एक-दूसरे से जुड़ गये। ऐसा स्नेह मिलन हुआ कि इन गाँवों में सत्संग की भागीरथी बहने लगी। बाबासा के सर्वप्रथम सम्पर्क में आने का सुअवसर महलाँ निवासी राजावत कुशलसिंह को मिला। कुशलसिंह भी पुलिस सेवा में रहे हैं। दोनों ही जयपुर पुलिस प्रशिक्षण में सम्मिलित हुए। राजावत कुशलसिंह को सन्त थानेदार ने एक ही बार में ऐसा अमृत पिला दिया कि सदा सर्वदा के लिए उनके बनकर रह गये।

कालान्तर में पास-पड़ौस के गांवों में राजावत कुशलसिंह की धर्म-साधना की चर्चाएँ चलने लगी। वहीं पास में बगरू गाँव में एक ऊँट चराने वाला राईका रहता था। नाम था भोलू।

अध्यात्म साधना एक ऐसी पूँजी है जो जन्म-जन्मान्तर तक साथ देती है। पूर्व जन्म की संचित पूँजी लेकर जब कोई धरती पर आता है तो उसे स्वतः ही फिर सुयोग मिल जाते हैं। भोलू राईका ऐसा ही एक सुलझा हुआ जीव था। वह था तो निरा ग्रामीण और निरक्षर, किन्तु वह अक्षर ब्रह्म की साधना में लगा हुआ था।

उसने डिप्टी कुशलसिंह की महिमा सुनी और उनसे मिलने महलाँ आ उपस्थित हुआ। दोनों एक ही पथ के पथिक थे। प्रथम मिलन में ही एक-दूसरे की ओर आकर्षित हुए और शीघ्र ही परस्पर स्नेह सम्बन्ध बन गये। राजावत के माध्यम से राईका को उनके गुरु महाराज का परिचय प्राप्त हुआ। वह सन्त थानेदार के दर्शनों के लिए लालायित हो उठा।

बाबासा के सत्संग में जितने लोग आये हैं उनमें राजावत कुशलसिंह का स्थान अग्रणी है। बाबासा राजावत को इतना प्यार करते थे कि जब कभी वे नहीं आते तो उनसे मिलने महलाँ पहुँच जाते। संयोगवश कुछ दिन बाद बाबासा महलाँ पधारे। डिप्टी कुशलसिंह ने

गुरु महाराज को भोलू राईका की बात बताई। समाचार पाकर भोलू तुरन्त महलाँ चला आया। दृष्टि पड़ते ही बाबासा ने भोलू को पहचान लिया। उसे देखते ही अपना लिया। भोलू को सन्त महापुरुष से मिलकर इतनी प्रसन्नता हुई जैसे उसे कुबेर का अक्षय कोष मिल गया हो। वह जिसकी तलाश में था, उन्हें सहज ही पा लिया। अपना जीवन उनके श्रीचरणों में समर्पित कर दिया। उन्हें अपना गुरु मान लिया। भोलू प्रायः गुरु महाराज से मिलने मनोहरपुरा आया करता था। कहते हैं बाबासा भी उसके घर बगरू गये थे। बाबासा के प्रति भोलू का प्रेम अद्वितीय था।

एक बार भोलू राईका पेड़ पर से गिर गया। उसका एक पैर टूट गया। उसे जयपुर बड़े अस्पताल में भर्ती कराया। पैर का घाव बढ़ रहा था। कुशलसिंह अस्पताल छोड़कर नहीं गये। पूरा पैसा लगाया, पर बात नहीं बनी। आखिर उसका पैर काट दिया गया। जब ठीक हो गया तो वह एक पैर से चलकर अपने गुरु महाराज के दर्शन करने आया करता। जब सन्तजी सिटी पैलेस नहीं मिलते तो खातीपुरा फार्म पर पहुँच जाता। वहां भी नहीं मिलते तो उनके गाँव मनोहरपुरा पहुँच जाता। कितना ही चलना पड़े दर्शन करके ही लौटता। महलाँ निवासी दुर्गाराम भी बाबासा के शिष्य थे जो भोलू का सत्संग लाभ लेने यदा-कदा भोलू के घर चले जाते। कभी भोलू डिप्टी साहिब के पास महलाँ चला आता और दो चार दिन लगातार सत्संग चलता रहता। आनन्द की त्रिवेणी बहती रहती। सत्संगी दुर्गाराम ने अपने संस्मरण में इसका उल्लेख किया है। दुर्गाराम एक जगह लिखते हैं :-

"जिन दिनों गुरु महाराज सिटी पैलेस में विराजते थे, मैं जब कभी जयपुर आता तो यह चाहता कि गुरु महाराज के दर्शन बाजार में ही हो जावें। सिटी पैलेस में जाने में देर लगती थी। यह विचार रहता और आपके दर्शन बाजार में ही छोटी चौपड़ से बड़ी चौपड़ के बीच ही हो जाते। एक-दो बार जिधर मुझे काम होता उधर ही आप सामने से पधारते हुए मिल जाते। यह मेरी आदत हो गई थी और मैं इस बात को समझ ही नहीं पाया। एक बार महाराज ने

बाजार में ही फरमाया कि हम तो उस आदमी से खुश होते हैं जिसके एक पैरे होते हुए भी मैं जहाँ होता हूँ वहाँ पहुँचता है। महाराज का भोलूजी रैबारी (राईका) बगरूवाले की ओर इशारा था और फरमाया कि उसे हमारे दर्शन का फल यह मिला कि पेड़ से गिरने पर पैर काट दिया गया।

आपका यह फरमाना था कि मेरे धक्का-सा लगा कि मेरे तो दोनों ही पैर हैं और मैं आज तक कितनी गलती करता रहा और आप न जाने कहाँ से पधार कर दर्शन देते रहे।''

अमृत भोजन

जयपुर महाराजा सवाई मानसिंह ने रिटायर्ड एस.आई. रामसिंह को अपने खातीपुरा फार्म-हाऊस की सम्भाल पर रख लिया था। आप अनुमानतः दो वर्ष तक खातीपुरा फार्म पर रहे। दरबार की ओर से पूरी सुविधा थी, किन्तु आप अपने हाथ से ही भोजन बनाया करते। फार्म पर आपके पास अनेक नौकर थे, पर किसी से कोई काम नहीं लेते।

एक दिन रामसिंह भाटी जयपुर में घूम रहे थे। बाजार में सत्संगी दुर्गाराम से भेंट हो गई। वह किसी काम से जयपुर आया हुआ था। बाजार में गुरु महाराज के मिल जाने पर दुर्गाराम बहुत प्रसन्न हुआ। आपने उसके कुशल समाचार पूछे। बाबासा की उस पर असीम कृपा थी। वह भी उन्हें अपना सर्वस्व मानता था।

बाबासा ने पूछा, 'महलाँ से कब आये?' दुर्गाराम ने बताया कि आज महलाँ से ही आ रहा हूँ। गाँव से सुबह चला था।

बाबासा बोले कि तब भोजन कहाँ किया। दुर्गाराम ने बताया कि मैं तो सुबह घर पर कलेवा (नाश्ता) करके चला था। अब गाँव जाकर भोजन करूँगा।

बाबासा ने दुर्गाराम की ओर देखा और मुस्कराकर बोले, ''तब आज हमारे साथ चलो आपको अमृत भोजन कराएंगे।''

दुर्गाराम ने सोचा आज तो गुरु महाराज की कोई कृपा हो गई। अमृत भोजन अवश्य करना चाहिए। उसे संध्या को महलाँ पहुँचना था, किन्तु वह उनके पीछे हो लिया। देर संध्या को खातीपुरा फार्म-हाऊस पर पहुँच गये। पहले आन्तरिक पूजा चली, फिर वार्तालाप चलता रहा। देर रात को बाबासा ने भोजन बनाना आरम्भ किया। तीखे मसाले डालकर महकती हुई सब्जी बनाई। फिर धीरज के साथ रोटियाँ बनाई। रोटियों में खूब घी डाला। बाबासा प्रत्येक काम को धीरज के साथ किया करते थे। भोजन भी सदा की भाँति बड़े धीरज के साथ पकाया जा रहा था। दुर्गाराम ने हाथ बटाना चाहा, पर आपने मना कर दिया। भोजन तैयार होते-होते एक पहर रात बीत गई। दुर्गाराम को भूख तो सता ही रही थी, नींद भी सताने लगी। दुर्गाराम अपने संस्मरण में लिखते हैं कि बड़ी मुश्किल से नींद को रोकता रहा। वास्तव में यह नींद नहीं थी, उस ओर से कृपा की धार बड़े वेग से बह रही थी। फैज़ उतर रहा था।

जब नींद ज़्यादा सताने लगी तो बाबासा कहने लगे, ''देखो दुर्गाराम! अमृत भोजन बन रहा है।'' दुर्गाराम ने कठिनाई से आँखें खोलकर हाँ में हाँ मिला दी। तब बाबासा मुस्कराकर बोले, ''जानते हो अमृत भोजन कैसा होता है।'' दुर्गाराम ने अर्ज किया, ''साहिब मैं तो नहीं जानता।''

''अरे भाई, जब खूब भूख लग रही हो तब जो कुछ मिल जाय वही अमृत के समान लगता है। यही अमृत भोजन की पहचान है।''

भोजन बना लेने के बाद आपने सारा सामान भीतर जमाया। पसीना सुखाया। भीतर से आम लाए, जिन्हें ठण्डे पानी में भिगोया। तब तक आधी रात हो आई। भोजन अमृत बन चुका था। अब आपने भोजन परोसा। पहले सत्संगी को, फिर अपने लिए। धीरज के साथ भोजन करने बैठे। भोजन पा लेने के बाद अपने बराबर अपने हाथ से सत्संगी का बिस्तर लगाया। बिस्तर पर बैठकर मधुर स्वर में एक भजन सुनाया और बोले, ''भोजन को भजन में बदल लो और नींद को याद में।''

प्रेम-वर्षण

खातीपुरा फार्म के व्यवस्था कार्य से उपराम होने के बाद सन्त रामसिंह भाटी सिटी पैलेस, जयपुर में अनुमानतः ग्यारह वर्ष बिराजे। अधिकांश सत्संगी जयपुर राजप्रासाद के उस पावन प्रकोष्ठ से जुड़े हुए हैं, जहाँ अँधेरी सुरंग को पारकर आराइश के महलों में शांत एकान्त बारहदरी में वह डाढ़ीवाला ठाकुर अपनी मौज में मस्त हुआ बैठा मिलता। जब कोई व्यक्ति सौभाग्यवश आपके पास पहुँच जाता तो आप उसे देखते ही आसन से खड़े हो जाते और मुस्कराकर स्वागत करते हुए कहते ''आइए साहब पधारिये, साहब बिराजिये।'' **आगन्तुक पर उसी क्षण प्रेम-वर्षण आरम्भ हो जाता। दीप्तोज्वल मादक नेत्रों से रस बरसने लगता। अपरिचित से इस तरह मिलते जैसे कोई चिर-परिचित स्नेही स्वजन मिला हो। कहीं कोई औपचारिकता, बाह्याचार या दिखावा देखने को नहीं मिलता। स्नेह से सराबोर, सर्वात्मभाव और उल्लास भरा वार्तालाप बाबासा की पहचान बन गई थी।**

एक दिन एक सत्संगी अपने घर से सिटी पैलेस भूखा चला आया। घरवाली ने तो थाली परोस दी थी, पर वह भोजन की थाली पर से उठकर चला आया। बात यह हुई कि घर पर चावल बने थे। मीठे और नमकीन। चिकित्सक के परामर्शानुसार उसे चावल खाना मना था। वह बहुत दिनों से चावल से परहेज रख रहा था। किन्तु उस दिन चावल खाने को ऐसा जी ललचाया कि रहा ही नहीं गया। धर्मपत्नी ने थाली में चावल नहीं परोसे। वह थाली छोड़कर घर से निकल आया और सीधा सिटी पैलेस बाबासा की शरण में चला आया।

दिन चढ़ आया था। बाबासा दोपहर का भोजन बनाने की तैयारी में लगे थे। सत्संगी को देखते ही आपने फरमाया, 'आइए टण्डन साहब[1], ठीक टाइम पर पधारे। आज आप भोजन हमारे साथ करेंगे। आज चावल बनायेंगे मीठे और नमकीन, दो तरह के। सत्संगी कुछ समझ नहीं पाया। वह हाथ जोड़कर बोला, ''माफी चाहता हूँ साहब!

1. सत्संगी बन्धु मूलराज टण्डन

मुझे डॉक्टरों ने चावल खाना मना कर रखा है।'' बाबासा यह सुनते ही ठहाका लगाकर जोर से हँसे। कहने लगे कि यह मना तो आपके घर पर लागू है, यहाँ थोड़े ही है, यहाँ तो परमात्मा का प्रसाद मानकर जीमो।

सत्संगी को घर की घटना याद हो आई। मन ही मन पछताने लगा। आखिर बाबासा को आप बीती कह सुनाई। बाबासा ने सुनी अनसुनी कर दी और कहने लगे कि जाने दो इन बातों को, आप तो हँसी-खुशी की बातें करो। उस दिन आगन्तुक सत्संगी ने सन्त महापुरुष के साथ बैठकर भर पेट चावलों का भोजन पाया।

चावलों के भोजन की बात सत्संगी ने अन्य साथियों को सुनाई। उसकी एक कविता भी बनाई। जब बाबासा को इस बात का पता लगा तो आपने नाराजगी प्रकट की और कहा कि हर बात कहने की नहीं हुआ करती। प्रायश्चित्त स्वरूप सत्संगी ने एक दिन का उपवास रखा।

ऐसा ही एक रोचक प्रसंग एक दूसरे सत्संगी का है।

याद किया तो चला आया

आरम्भ के वर्षों में सिटी पैलेस में जो सत्संगी आने लगे उनमें एक युवक शेखावटी से चलकर राम महाशय के पास आया करता था। एक बार जब वह सिटी पैलेस पहुँचा तो उसे वहां राम महाशय नहीं मिले। जब कभी बाबासा जयपुर छोड़कर बाहर जाते तो एक स्लेट पर इस आशय की सूचना लिख जाया करते थे। युवक की दृष्टि जब स्लेट पर पड़ी तो उस पर लिखा हुआ था कि गाँव जा रहा हूँ। कब लौटेंगे इसकी कोई सूचना नहीं थी। युवक यह सूचना पढ़कर निराश हो गया। उसका जयपुर आना निरर्थक रहा। वह थोड़ी देर तो इस अधेड़-बुन में बैठा रहा कि अब क्या करना चाहिए, फिर वह सिटी पैलेस से लौट आया। बाज़ार में उसे एक परिचित थानेदार मिले, किन्तु वह भाटी रामसिंह के गांव का पता नहीं बता पाये। सहसा थानेदार को याद आया कि जयपुर रेलवे स्टेशन के सामने पावरहाऊस के पास एक पुराने सत्संगी रहा करते हैं, जिनका नाम हरनारायण सक्सेना है। उनके यहां सत्संग हुआ करता है। वहां पता लग सकता है। यह बात सत्संगी को बताई।

दूसरे दिन प्रातः वह युवक सक्सेना साहब के मकान पर पहुँच गया। वहाँ संयोगवश सत्संग आरम्भ होने को ही था कि वह भी सत्संग में सम्मिलित हो गया। आन्तरिक पूजा आरम्भ हुई। आगन्तुक ने भी अपने नेत्र मूँद लिए। पूजा चलती रही। जब नेत्र खोले तो युवक क्या देखता है कि राम महाशय गोल साफा बाँधे प्रसन्न मुद्रा में कमरे के भीतर एक ओर बैठे मुस्करा रहे हैं। पूज्य ठाकुर साहिब को अचानक अपने बीच पाकर सब सत्संगी प्रसन्न हो गये। डॉ. हरनारायण सक्सेना और डाढ़ीवाले ठाकुर एक ही गुरु के शिष्य थे। दोनों के बीच प्रगाढ़ स्नेह-संबंध थे। जब भी कहीं मिल जाते एक-दूसरे को देख हरे हो जाते। सक्सेना साहब उन्हें देखते ही खड़े हो गये। हाथ-जोड़कर अभिवादन किया और बोले, ''अरे भाई साहब! आप कब आये, आज तो बड़ी कृपा की। आप वहाँ कहाँ बैठ गये, ऊपर आइए।''

सन्त महापुरुष मधुरवाणी में बोले, 'साहब, मैं आराम से बैठा हूँ। सत्संग होने दीजिए।'

सन्त महापुरुष के सान्निध्य में कुछ देर सत्संग चला। प्रसाद वितरण हुआ। जब बाबासा जाने को हुए तो उस युवा सत्संगी को संकेत से अपने पास बुलाया। उसके कंधे पर हाथ रखा और उसे मकान के सामने वाले बड़े चबूतरे के छोर पर ले गये। वहाँ एक ओर खड़े होकर सत्संगी से बोले, ''आपने याद किया तो मैं चला आया।''

उपेक्षित का आदर

मनोहरपुरा का भाटी परिवार आरम्भ से ही जयपुर राजघराने से जुड़ा रहा है। वर्तमान पीढ़ी में भाटी रामसिंह के ज्येष्ठ पुत्र हरिसिंह जयपुर दरबार की सेवा में रहे। उन्हें सिटी पैलेस में आवास सुविधा मिली हुई थी। यहीं वर्षों तक बाबासा विराजे हैं, जहां सत्संग का आनन्द लुटता रहा। सिटी पैलेस के इस शान्त एकान्त प्रकोष्ठ में सन्त थानेदार का सुसंग लाभ लेने लोग प्रातः-सायं बने रहते। प्रेम की हाट सदा खुली मिलती। आनन्द का मेला लगा रहता। बाबासा का प्रेम-वर्षण अनवरत चलता रहता। प्रेम की भागीरथी बहती रहती। प्रेमीजन अपने

पारिवारिक कष्टों को भुलाकर उस भागीरथी के तट पर पहुँच एक सुखद शीतलता का अनुभव करते रहते। यहाँ सिटी पैलेस में आकर एक उपेक्षित को जो आदर मिला, जो सहज प्रेम मिला, जो नया परिवार मिला वह एक प्रेरणादायक प्रसंग है। यह प्रसंग है- लाला मातूराम जैन का।

मातूराम एक सम्पन्न व्यक्ति थे। वे रोहतक (हरियाणा) के रहने वाले थे। दिल्ली में इनका बड़ा कारोबार था। मातूराम के स्वयं के कोई सन्तान नहीं थी। उनके भतीजे कारोबार को सम्भालते थे। अचानक ऐसी घटना घटी कि उनकी पत्नी चल बसी। तब से लाला मातूराम जीवन के प्रति उदास भाव रखने लगे। बड़ी ऊब अनुभव करने लगे। उनका किसी काम में मन नहीं लगता। जीवन दूभर होता जा रहा था। एक दिन वे अपना घर छोड़कर एक अटेची लेकर निकल पड़े और अपने एक मित्र के पास जयपुर चले आये। फिर कभी लौटकर अपने परिवार के बीच नहीं गये। उनके मित्र राजस्थान में किसी उच्च पद पर सेवारत थे; जहां दिन भर कार्यव्यस्त रहना पड़ता। लाला मातूराम पाँच-सात दिन मित्र के मकान में ठहरे, किन्तु उनका जी नहीं लगा। पूरे दिन अकेले बैठे रहते। आखिर अपने मित्र के सहयोग से किसी काम पर लग गये। किराए का मकान लेकर अलग रहने लगे। इससे अकेलापन और बढ़ गया। उन्हें पता लगा कि पास में ही सुभाष चौक में जज साहब के मकान पर सत्संग हुआ करता है। मातूराम सत्संग में आने लगे, किन्तु शान्ति नहीं मिली। एक दिन जज साहब के सामने अपनी व्यथा व्यक्त कर दी।

जज साहब विचार में पड़ गये। फिर सोचकर बोले, ''मैं आपको रविवार को सिटी पैलेस पूज्य ठाकुर साहिब के पास ले चलूँगा, वे शान्ति और प्रेम के भण्डार हैं।''

जज साहब ने लालाजी को सिटी पैलेस डाढ़ीवाले ठाकुर के दरबार में ला हाज़िर किया। पहली मुलाकात ने ही रंग दिखा दिया। अब तो लाला मातूराम को चैन ही नहीं पड़ता। आये दिन सिटी पैलेस आने लगे। बाबासा हँस-हँस कर बातें करते और दोनों मस्ती छानते रहते।

मातूराम जैसे ही अंधेरी सुरंग को पारकर अपने प्रेमी मित्र के पास पहुँचते, सन्त महापुरुष आसन पर से खड़े होकर हाथ जोड़कर मधुर मुस्कान के साथ स्वागत करते– ''आइये साहब, पधारिये-पधारिये, विराजिये।'' स्वयं अपने हाथ से आसन बिछाते और अपने समक्ष आसन पर बैठाते। उपेक्षित प्राणी के साथ मित्रवत् व्यवहार करते और ऐसा आदर करते कि आगन्तुक आत्मविभोर हो उठता। लाला मातूराम घरेलू उपचार में बड़े पारंगत थे। लोगों को मुफ्त दवा दिया करते थे। बाबासा उन्हें हकीम साहब कहकर पुकारते।

सिटी पैलेस का सुसंग ऐसा रंग लाया कि अपरिचित शीघ्र ही घुल-मिल गया। अब तो वह गलीचे पर बैठा मौज-मस्ती में आकर जेब में से बीड़ी निकालता और सिटी पैलेस के उस पावन प्रकोष्ठ में बीड़ी के कश छोड़ता रहता। अन्य सत्संगियों को यह दृश्य बड़ा अजीब लगता, किन्तु कोई कुछ नहीं कहता।

थोड़े दिनों में ही लाला मातूराम को पता लग गया कि जिन्हें वह अपना दोस्त मान बैठा है, वे कोई ऊँची हस्ती हैं। सन्त महापुरुष हैं, जो किसी को देखते ही भीतर की सब बात जान जाते हैं। जिन्हें दूसरे का अन्तर्मन शीशे की तरह साफ दिखाई देता है। अब तो बीड़ी की तलब होने पर भी उनका हाथ जेब की ओर नहीं जाता। ऐसे समय में बाबासा मन्द-मन्द मुस्काते और पूछ बैठते कि हकीम साहब आज बीड़ी नहीं पीओगे क्या? आपकी बीड़ी की धुंआ जब आकाश में लहराती हुई उड़ती है तो बहुत अच्छी लगती है। मातूराम यह सुनकर पानी-पानी हो जाते। ऐसे ही अनेक प्रसंग चलते रहते।

एक दिन अवसर पाकर लाला मातूराम ने उन परमस्नेही ठाकुर के समक्ष अपने मन की बात कह दी। वे बोले, ''साहब जब आपके पास आता हूँ तो मेरा दिल बाग-बाग हो जाता है। जो लोग आपके दरबार में हाज़िर होते हैं, वे सब आपके कारण मेरा अदब करते हैं। यहाँ आकर मैं बहुत सुखी हो गया हूँ, लेकिन जब मकान में अकेला रहता हूँ तो बड़ी घुटन महसूस करता हूँ। इसका कोई इलाज हो जाए।''

सन्त थानेदार ने सहज ही समाधान कर दिया कि हकीम साहब आप अपने प्रेम का दायरा बढ़ा लो। आस-पास के लोगों से प्यार-मुहब्बत करो। प्रेम करके तो देखो। प्रेम में सब कुछ मिल जाता है।

मातूराम ने अविश्वास के स्वर में कहा, ''हुजूर, मेरे सामने तो सिंधी रहते हैं। रास्ते में उनके बच्चे ऊधम मचाते रहते हैं। मैं उनकी बोली ही नहीं समझता।''

बाबासा ने समझाया कि उन बच्चों को अपना मानो। उनसे बातें किया करो। उन्हें प्यार किया करो। कुछ खिलाया-पिलाया करो। इससे कड़ी जुड़ जाएगी। आपका मन लग जाएगा।

लाला मातूराम को प्रेम का राजमार्ग मिल गया। बच्चे प्यारे लगने लगे। जीवन में सरसता आ गई। कुछ ही दिनों में पड़ोस का सिन्धी परिवार उनका परिवार बन गया। सुख-दुःख में एक-दूसरे का हाथ बटाने लगे। दैवयोग से एक दिन लाला मातूराम सिटी पैलेस से लौट रहे थे कि जलेब चौक के ढलान में साइकिल से जा गिरे। गहरी चोट आई। एक पैर की चूल की हड्डी खिसक गई। सिन्धी परिवार ने उन्हें संभाला। बड़ी बच्ची बेबी (इन्दिरा) और छोटे बच्चे सेवा में लग गये।

जब पैर कुछ ठीक हुआ तो लाला मातूराम को सिटी पैलेस की याद सताने लगी। मातूराम के कहने पर सिन्धी परिवार का मुखिया खानचन्द डूलाणी उन्हें साइकिल पर बैठाकर सिटी पैलेस तक लाया। मातूराम की सेवा का फल यह मिला कि खानचन्द डूलाणी डाढ़ीवाले ठाकुर के दरबार में जा पहुँचा। सन्त महापुरुष ने इस सेवाभावी को अपना लिया। खानचन्द डूलाणी का पूरा परिवार सन्त थानेदार की शरण में आ गया। वह सिंधी परिवार बाबासा के प्रति श्रद्धावान है। पूरा परिवार सन्त थानेदार को देवता की भाँति पूजता है। धूप-अगरबत्ती करते हैं। समय-समय पर समाधि मंदिर पर सिर टेकने आते हैं। मनौती मानते हैं और इच्छित फल पाते हैं।

उधर सिटी पैलेस के सन्त की कृपा से एकाकी उपेक्षित प्राणी को परित्राण मिल गया। वृद्ध मातूराम को नया संसार मिल गया। नया परिवार

मिल गया। फिर वह जीवनपर्यन्त जयपुर छोड़कर कहीं नहीं गया। साबुन वाले सिंधी खानचन्द डूलानी के बाल-बच्चे उसके अपने बच्चे बन गये।

मातूराम को एक बार तीव्र अतिसार हो गया। बाबासा का संकेत पाकर कुछ सत्संगी उनकी सेवा में रहे, किन्तु सबसे बढ़कर सेवा सिन्धी परिवार ने की। खानचन्द की बड़ी लड़की बेबी आकर सेवा में जुट जाती। लाला मातूराम के बार-बार कपड़े बदलती, कपड़े धोती, कमरे को साफ-सुथरा रखती। अब लाला मातूराम की अन्तिम इच्छा यह रह गई कि वह अपनी प्यारी बेटी बेबी का विवाह अपनी आंखों से देख ले। मातूराम की अंतिम इच्छा पूर्ण हुई। एक दिन रात को बेबी की बारात आ पहुँची। धूमधाम मच गई। लाला मातूराम बनठन कर बारात की अगवानी करने में सबसे आगे रहे। उनमें एक नई उमंग आ गई। वे फूले नहीं समा रहे थे। लाला मातूराम कहा करते थे कि पूज्य ठाकुर साहिब ने मुझे नया जीवन दे दिया।

लघु प्रसंग

एक दिन जब लेखक सिटी पैलेस के पावन प्रकोष्ठ में पहुँचा तो वहाँ बाबासा नहीं मिले। अनुमान से ऐसा लगा कि यहीं कहीं गये हुए हैं। कमरे के ताला नहीं था। इतने में आप आ गये। आप बड़ी प्रसन्न मुद्रा में थे। हँसी फूट रही थी। आसन पर बैठकर कपड़ों में से एक कटोरा निकाला और ठहाका लगाकर जोर से हँसे। फिर हँसते ही चले गये। हँसी रुक ही नहीं रही थी। जब हँसी का राज खुला तो बड़ा आनन्द आया।

वह कटोरा तरबूज की लाल-लाल गिरी भरकर लाने को बाजार ले जा रहे थे। मार्ग में से ही वापस लौट आये। बाबासा ने बताया कि आज तो मन मतीरा खाने को मचल उठा। जब समझाने पर भी नहीं माना तो इसे मतीरा (तरबूज़) खिलाने की सोच ली। कटोरा साथ लेकर चला। महलों से बाहर निकलते ही मन मान गया। वहीं से लौट आया। यह मन बड़ा विचित्र है। बार-बार मन को देखते रहने पर वह सही रास्ता पकड़ लेता है। इसे ज्यादा नहीं कसना चाहिए।

X X X X X X X

डिप्टी कुशलसिंह राजावत की धर्मपत्नी जोधीजी और सत्संगी दुर्गाराम की सहधर्मिणी एक बार गुरु महाराज के दर्शन करने मनोहरपुरा आये। दुर्गाराम साथ में थे। जोधीजी ने दुर्गाराम की पत्नी की बड़ी तारीफ की। उस युवती ने बाबासा को प्रणाम किया। दूसरे दिन जब लौटने को हुए तो बाबासा बाहर दरवाजे पर दुर्गाराम के पास आये। आपने उदास भाव से दुर्गाराम से कहा कि भाई घरवाली को मित्र मानकर चलना चाहिए। इस संसार में आना-जाना बना रहता है। वे तीनों सवाईमाधोपुर लौट गये। कुछ मास-बाद ही दुर्गाराम की पत्नी का देहान्त हो गया। तब दुर्गाराम को ख़याल आया कि गुरु महाराज उस दिन उदास क्यों थे।

X X X X X X X

बाबासा के सुपुत्र नारायण सिंह बताया करते थे कि मैंने बचपन में पिताजी साहब का दो बार कहना नहीं माना। दोनों ही बार उसके नतीजे भोगने पड़े।

मनोहरपुरा कोटड़ी के बाहर के चौक में एक कुई है। यह कुई खोदी जा रही थी। बाबासा जब जयपुर जाने लगे तो बड़ी बाईसा (सती बाईसा) से यह कहकर गये कि नारायण सिंह को कुई के नजदीक मत जाने देना। बाईसा ने नारायण सिंह से कहा कि तुम कुई से दूर रहना। नारायणसिंह आँख बचाकर कुई के पास चले गये। रस्सी पकड़कर भीतर झुककर देखा। रस्सी हाथ से छूट गई। कुई में गिर गये। कुई खोदने के औजार वहीं पड़े थे। उन पर पैर नहीं टिका और बच गये। मामूली चोट आई।

सन् 1951 में महाराजा हाई स्कूल में जब दसवीं में पढ़ रहे थे तो स्कूल से स्काउटों की टोली हिमालय दर्शन के लिए निकली। केदारनाथ, बद्रीनाथ, रानीखेत, नैनीताल और काठगोदाम का देशाटन था। बाबासा ने नारायणसिंह को मना किया कि पहाड़ का पानी अनुकूल नहीं रहेगा। जब विशेष आग्रह किया तो बाबासा ने रुपए दो सौ यात्रा व्यय के दे दिए। नारायण सिंह को नैनीताल में तीव्र अतिसार हुआ। लौटने पर भी वही हाल रहा, जिसका असर लम्बे समय तक बना रहा।

X X X X X X X

एक हिन्दू महिला कलवाड़ा ग्राम में उन दिनों सती हो गई थी। बड़ी बाईसा दयालकंवर ने अन्य महिलाओं के संग कलवाड़ा सती स्थल पर जाने की बाबासा से अनुमति मांगी। बाबासा ने स्नेहसिक्त वचनों में कहा, ''बाईसा आप वहां जाकर क्या करोगी। आप तो स्वयं सती हैं।'' कालान्तर में बड़ी बाईसा अपने पति के संग जिला सीकर के खूड़ ग्राम में सती हो गई।

छोटे बाईसा लक्ष्मणकंवर का विवाह तहसीलदार साहब नाहरसिंह पाटोदा के साथ संपन्न हुआ। बड़ी बाईसा सती हो गई और छोटी बाईसा को संतान नहीं हुई। इससे पूज्य माताजी के बड़ा विचार बन गया। एक बार अपनी भावना पूज्य ठाकुर साहिब से व्यक्त कर दी। आपने आश्वासन दिया कि ऐसा मत सोचो। गुरु भगवान की कृपा से छोटे बाईसा के सुपुत्र होगा, जो उन दोनों की खूब सेवा करेगा। सन्त महापुरुष की धारणा सत्य सिद्ध हुई। अन्तर इतना ही रहा कि बाईसा ने पुत्र को उदर में धारण नहीं किया, गोद में धारण कर लिया। दत्तक पुत्र भाणेज गोविंद सिंह पाटोदा दिखने में जितना सुन्दर है, उतना ही शालीन है।

एक बार छोटी बाईसा अधिक बीमार हो गई। पाटोदा से सिटी पैलेस बाबासा के पास चली आई। पूज्य माताजी भी यहीं आ गई। एक दिन छोटी बाईसा की तबियत अधिक बिगड़ गई। माताजी घबरा गई। माताजी ने पूज्य ठाकुर साहिब से आकर कहा। बाबासा बाईसा के पास गये। बाईसा का शीश अपनी गोद में रखकर उसे सहलाने लगे और हँसकर बोले, ''बाईसा आप अच्छी हो जाओगी, अभी तो आपकी लम्बी उम्र है।''

बाईसा अच्छी हो गई। इन बातों को 39 वर्ष व्यतीत हो गये। आनन्द में हैं।

X X X X X X X

सिटी पैलेस में एक युवा सत्संगी डाढ़ीवाले ठाकुर के पास आया करता था। एक दिन उसे उदास देखकर बाबासा ने पूछ लिया कि आज मुँह कैसे फुला रखा है। सत्संगी ने सच बात बता दी। बीबी से लड़-झगड़ कर सिटी पैलेस चला आया था। बाबासा ने कहा, ''पत्नी को हम ख़याल बनालो। दोनों प्रेम से रहा करो।''

युवक ने शिकायत के स्वर में कहा कि जो काम कहता हूँ वह उल्टा ही करती है। स्वभाव से लाचार है।

बाबासा ने बताया कि आप भी तो स्वभाव से लाचार हो। पत्नी पर हाथ उठाना नामर्दों का काम है। आइन्दा ऐसा मत करना।

फिर वही हरकत कर ली। पछताने लगा। सीधा सिटी पैलेस पहुँचा। बाबासा को देखकर आंखें भर लाया और बोला, ''मैं आपके दरबार में बैठने लायक नहीं हूँ। मुझे माफ करना।'' बाबासा ने धीरज बंधाया और अपने पास बैठाया। डॉ. चन्द्रगुप्त से कहा कि भीतर से केले लाओ। बाबासा ने अपने हाथ से केला छीला और आवेश से उत्पीड़ित युवक को खाने को दिया। आगे की बात युवक से पूछी तो कहने लगा, ''केला खाते ही मेरा सारा क्रोध, ग्लानि और पश्चाताप एक ही बार में मिट गया।''

उनकी श्रीमती जी ने बताया कि सिटी पैलेस में बाबासा के दर्शन करने के बाद मेरा मन ही बदल गया।

इन बातों को वर्षों बीत गये। तब से दोनों प्राणी प्रेम से रह रहे हैं।

X X X X X X X

एक प्रेमी सत्संगी सिटी पैलेस के सत्संग में आया करता था। सत्संगी का स्थानान्तरण जयपुर से ब्यावर हो गया। सत्संगी ने यह बात बाबासा को बताई। बाबासा यह सुनकर मौन रहे, फिर शान्त भाव से बोले शुक्र है। कुछ माह बाद सत्संगी पुनः जयपुर आ गया। बाबासा के दरबार में उपस्थित हुआ। प्रसन्न होकर अपने जयपुर आगमन की बात बताई। उसी शान्त मुद्रा में वही शब्द दोहराया, परमात्मा का शुक्र है।

X X X X X X X

एक युवा सत्संगी टी. बी. सैनेटोरियम के कॉटेज वार्ड में आपकी महिमा सुनकर चला आया। युवक को देखकर बाबासा हँसने लगे। फिर विनोद भरी वाणी में अन्य उपस्थित सत्संगियों से कहने लगे कि कोई इस समय पिक्चर देखने गया है, कोई यार दोस्तों के साथ तफरी कर रहा है, देखो इनको क्या सूझी है जो यहाँ अस्पताल में चले आये। युवक चुपचाप एक ओर बैठ गया। बाबासा की विनोद वार्त्ता और प्रसन्न मुद्रा युवक के दिल में घर कर गई। जब जी चाहता सैनेटोरियम चला आता।

एक दिन पूछ बैठे- रामायण पढ़ी है, गीताजी पढ़ी है, हनुमान चालीसा आता है। जब युवक ने गर्दन हिलाई और ना कहा, तो आप हँस कर बोले कोई गाना ही सुना दो। फिर आप हँसने लगे।

वह मनमौजी युवक जब एक दिन बाबासा से मिलने आ रहा था तो मार्ग में उसकी दृष्टि सामने से आ रही एक युवती पर पड़ी। जब आगे निकल गई तो फिर उसकी ओर मुड़ कर देखा। उस दिन आन्तरिक पूजा सम्पूर्ण होने पर बाबासा बोले, ''यहाँ ऐसे लोग चले आते हैं, जो मुड़-मुड़कर देखते हैं।'' फिर और बातें करने लगे।

उस दिन से सत्संगी की ऐसी स्थिति हो गई कि किसी महिला की तरफ कभी मुड़कर नहीं देखा।

X X X X X X X

सैन भगत के साथ सन्त थानेदार का असीम स्नेह था। पुराना परिचय था। आरम्भ के वर्षों में फतेहगढ़ भण्डारे में सन्त थानेदार के साथ सैन भगत जाया करता था। दोनों समवयस्क थे। सैन भगत ने सूफ़ी सन्त की शरण ले ली थी। सैन भगत सन्त थानेदार को 'गुरु महाराज' कहा करता था और सन्त थानेदार सैन भगत को राम परतापा कहते थे। वह राम-राम किया करता था।

सैन भगत का घर उजड़ गया था। अकेला रह गया था। पत्नी का देहान्त होने के बाद वह अनमना सा रहने लगा था। बाबासा की कृपा से फिर घर बस गया। गुरु महाराज के आशीर्वाद से तीन लड़के हो गये।

शहर की चार दीवारी में किराये के मकान से पीछा छुड़ाकर सैन भगत ने शास्त्री नगर की सूनी धरती पर अपनी कच्ची गुवाड़ी (घर) बाँध ली। अपने बच्चों को लेकर वहाँ रहने लगा। समय पाकर शास्त्रीनगर की नगर-योजना तैयार हुई। सैन भगत के घर के सामने से मुख्य सड़क निकल गई। कुछ वर्षों बाद चारों ओर आबादी बढ़ गई। एक दिन दो बड़े अधिकारी आये और उसकी गुवाड़ी में होकर चूने की लकीर डलवा गये। उनमें से बड़े अधिकारी ने सैन भगत को बुलाकर कहा कि इधर से सड़क निकलेगी। तीन दिन का टाइम देते हैं, अपने छप्पर और ईंटें हटा लेना। पहाड़ की तरफ से रास्ता आकर बड़ी सड़क में मिलेगा। यह नक्शा देख लो।

सैन भगत हाथ जोड़कर बोला, ''हाकिम साब, गरीब मार हो जासी।'' सैन भगत की पत्नी यह सब सुनकर घबरा गई और रोने लगी। घरवाली को रोते देख सैन भगत ने धीरज बंधाया। ''बावळी आछी काची ल्याई। आपणी पीठ पर समरथ धणी खड़ा है।''

सैन भगत के पास पूज्य ठाकुर साहिब का एक पुराना फोटो था, जिसको वह धूप अगरबत्ती किया करता था। वह फोटो के नीचे सिर टेककर बैठ गया।

बड़े अधिकारी को रात को नींद नहीं आई। आँख लगते ही नींद उचट जाती। वह बाहर बरामदे में घूमने लगा। उसके दिमाग में एक चित्र बन गया। बार-बार याद आने लगी- ''हाकिम साब, गरीब मार हो जासी।'' वह कमरे में गया, नक्शा निकाला और रास्ते को थोड़ा तब्दील कर दिया। सैन भगत का घर बच गया।

सैन भगत के बेटे-पोते बाबासा को राम-परमेश्वर मानते हैं। धूप अगरबत्ती करते हैं। पूरा परिवार सन्त थानेदार के प्रति श्रद्धाभाव रखता है। सैन भगत की पत्नी किशोरीबाई पूज्य ठाकुर साहिब को अपने श्वसुर से बढ़कर मानती है। ठाकुर साहिब का नाम नहीं लेती। फलाणसिंहजी कहकर सम्बोधित करती है। अपने परिवार को लेकर हर मकरसंक्रांति को समाधि मंदिर पर सिर झुकाने आती है। समाधि के सामने मुँह खोलकर खड़ी नहीं होती। थोड़ा घूंघट सारती है; सामने जो दाढ़ीवाले ठाकुर साहिब विराजमान हैं। ऐसे निराले ठाकुर जिन्होंने जीवन में कभी उल्लास और उत्साह को कम नहीं होने दिया, पावन समाधि पर आज भी वही आनन्द लुट रहा है।

परमार्थ प्रसंग

सन्त थानेदार ठाकुर रामसिंह एक लम्बे समय तक पुलिस सेवा में रहकर जनता की सेवा करते रहे। जहाँ भी रहे, अपने क्षेत्र में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखी। अनेक अपराधियों को अपने सौम्य स्वभाव, अलौकिक प्रेम, मधुर व्यवहार और प्रबल इच्छा के प्रभाव से सुमार्ग पर लगा दिया। इस प्रकार जनता जर्नादन की सेवा करते हुए स्वेच्छा से सन् 1944 ई. में पुलिस की नौकरी से त्यागपत्र देकर घर आ गये। शेष जीवन में वे निरन्तर परमार्थ में लगे रहे। जीवनपर्यन्त वे अपने इस पुनीत कर्म से विरत नहीं हुए। जब वे अशक्त और रोगग्रस्त हो गये तब भी उनके पास इसी प्रकार सत्संगी आते रहे। टी. बी. सैनेटोरियम के कॉटेज वार्ड में प्रति रविवार सत्संग का विशेष आयोजन होता, जिसमें बड़ी संख्या में सत्संगी भाग लेते रहे।

वृद्धावस्था में हर आदमी अपने परिवार के बीच रहकर आराम की जिन्दगी जीना चाहता है। बाबासा ने इस बात की तनिक भी परवाह नहीं की। उनके भरे-पूरे परिवार में सब प्रकार की सुविधा थी। पूज्य माताजी और अन्य परिवारजन उनकी सेवा में तत्पर खड़े थे। किन्तु आप ढलती आयु में मनोहरपुरा परिवार के बीच न रहकर वर्षों तक जयपुर सिटी पैलेस में अकेले रहे। केवल इसलिए कि आगन्तुक सत्संगियों को कोई असुविधा न हो। वे लोग आराम से सिटी पैलेस आकर सत्संग का लाभ ले सकें।

बाबासा के गुरु भगवान दूसरी बार आपसे मिलने सन् 1929 ई. में जयपुर पधारे। इस बार वे उन्हें अपने गाँव मनोहरपुरा ले

गये। कुछ दिन गुरुदेव सन्त-परिवार के बीच विराजे। थानेदार साहब ने बड़ा आनन्द मनाया। खूब सत्संग रहा। इस अवसर पर महात्माजी ने आपसे फरमाया था कि रामसिंह तुम्हारे पास जो सोहबत के लिए आया करे उसे बिठा लिया करो। बस ख़याल रखने की बात है कि अपने आपको भूल जाना चाहिए। यह ख़याल करना चाहिए कि प्रेम की धारा बह रही है। सामने बैठनेवाले को इसका एहसास होने लगता है, इसके लिए कुछ कहने सुनने की जरूरत नहीं।

सन्त थानेदार ने संकोचवश ऐसा नहीं किया। वे अपनी साधना में लगे रहे। कुछ समय यों ही व्यतीत हो गया। उन्हीं दिनों परमसन्त बृजमोहनलाल साहिब का पत्र आया कि आपको जो क़िबला लालाजी साहिब की ओर से हुक्म दिया गया था, अगर उसकी तामील नहीं हुई तो आगे जवाब देना पड़ेगा। इसके बाद उन्होंने सत्संगियों को अपने सामने बिठाना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार परमार्थ का मार्ग प्रशस्त होता चला गया।

अध्यात्म-साधना में सन्त सान्निध्य एक सशक्त सम्बल है। पल भर का सुसंग-लाभ जीवन को संस्कारित कर देता है। जिनका मन अपने वश में हो गया वे चाहें तो दूसरे के मन को भी सद्मार्ग पर मोड़ देते हैं। सिद्ध सन्तों की काया में कोमलता आ जाती है। सतत् साधना के फलस्वरूप वाणी में माधुर्य छा जाता है। मुख पर नूरानीयत आ जाती है। नेत्रों से प्रेम की मदिरा बहने लगती है। सामने बैठने वाले के नशा-छाने लगता है। चारों ओर के वातावरण में पवित्रता आ जाती है। मन अवसाद से ऊपर उठ आनन्द की भाव-भूमि पर विचरण करने लगता है। अन्तर में प्रेम का पारावार लहराने लगता है। सब प्राणी आत्मवत् प्रतीत होने लगते हैं। जन्म-जन्मान्तर के सत्कर्मों के फलस्वरूप जिसे समर्थ गुरु मिल गया उसे इसी जीवन में सब कुछ मिल गया। परमार्थ से जुड़े ऐसे ही कतिपय प्रसंग प्रस्तुत हैं।

यह भी एक नशा है

सन् 1934 की बात है भाटी रामसिंह पुलिस थाना नवलगढ़ में थानेदार के पद पर आसीन थे और राजावत कुशलसिंह पुलिस थाना मालपुरा में थानेदार। संयोगवश दोनों ही पुलिस लाइन्स फतहटीबा, जयपुर में पुलिस प्रशिक्षण में आये हुए थे। एक नेक थानेदार के रूप में भाटी रामसिंह को सब जानते पहचानते थे, जिनमें सर्वाधिक प्रभावित होने वाले थे कुशलसिंह। दोनों का पुराना परिचय था। किशोरावस्था में दोनों एक ही विद्यालय में पढ़ा करते थे। तब से ही भाटी रामसिंह के शील स्वभाव के कारण कुशलसिंह के स्नेह सम्बन्ध बन गये थे।

राजावत एक सीधा ईमानदार थानेदार था। उधर भाटी रामसिंह ईमानदारी के मापदण्ड थे। समान मान्यताओं के कारण दोनों में स्नेह संबंध दिन-दिन बढ़ रहा था। राजावत कुशलसिंह में बड़े मानवीय गुण थे, किन्तु एक अवगुण ऐसा था जिसने उनके सब गुणों पर पानी फेर दिया, वह था मदिरापान का दुर्व्यसन। संध्या होते ही कुशलसिंह बोतल खोल कर बैठ जाते।

कुशलसिंह का जन्म एक कुलीन परिवार में महलां ठिकाने में हुआ था। वह एक रईस तबियत का युवक था। वह स्वयं पीता और संगी-साथियों को पिलाता। सन्त थानेदार ने यह दृश्य देख लिया। भाटी रामसिंह ने एक दिन राजावत को अपने पास बैठाकर बड़ी मधुर वाणी में कहा, ''बना, आप शराब मत पिया करो।''

राजावत ने इस बात को हँसी में उड़ा दिया। संध्या होते ही राजावत के कमरे में महफ़िल जम जाती। सन्त थानेदार ने एक बार पुनः स्नेह भरे वचनों में राजावत को समझाया। इस पर राजावत बोले, ''आप क्या जाने शराब का मजा। एक दिन पीकर देखो। स्वर्ग आसमान से धरती पर उतर आता है।''

यह सुनकर सन्त थानेदार मुस्कराए और शान्त भाव से बोले, ''शराब हम भी पीते हैं, पैसे भी नहीं लगते और नशा भी चौगुना आता है।''

राजावत ने पूछा, ''क्या ऐसी शराब भी होती है, जिसका नशा चौगुना चढ़े।''

सन्त थानेदार ने फरमाया, ''होती है। आज शाम को आना, पिलायेंगे।''

उसी संध्या को युवा थानेदार भाटी रामसिंह के कमरे में आ उपस्थित हुआ। आपने फरमाया कि नल पर हाथ-पैर धो आओ। युवक हाथ-पैर धोकर सामने बैठ गया। बातें होती रहीं। राजावत पर नशा छाने लगा। वाणी ने मौन धारण कर लिया। पलकें झपक गईं। शरीर की सुध-बुध जाती रही। अन्तर में प्रकाश छा गया। ऐसा अद्‌भुत प्रेमवर्षण हुआ कि जीवन में एक रूपान्तर आ उपस्थित हुआ। जब आँखें खुली तो सन्त थानेदार सामने बैठा मुस्करा रहा था। राजावत ने आनन्द विह्वल होकर सन्त के पैर पकड़ लिए। कहते हैं राजावत को सात रात और सात दिन तक वही नशा छाया रहा। नेत्रों में एक अजीब मादकता आ बसी। संगी-साथी कहने लगे कि बना, आजकल तो दिन में ही पीते रहते हो क्या?

राजावत ने जो मदिरापान किया वह मदिरालय ही कोई और था। राजावत की नस-नस में नशा छा गया। ऐसा नशा पुनः करने को जी ललचा रहा था। राजावत को शराब से सदा के लिए छुटकारा मिल गया। कुशलसिंह को सन्त महापुरुष के प्रथम शिष्य कहलाने का गौरव प्राप्त हुआ।

जब से राजावत सन्त थानेदार की शरण में आ गये, उनका जीवन बदल गया। वह बाबासा को गुरु महाराज कहकर सम्बोधित किया करते। जीवनपर्यन्त तन-मन से उनके प्रति समर्पित रहे। थानेदार रामसिंह को डिप्टी कुशलसिंह प्राणों से भी अधिक प्रिय थे। जब कभी सिटी पैलेस जयपुर में डिप्टी साहब का प्रसंग चलता बाबासा का मुखारविन्द खिल उठता। डिप्टी साहब की प्रशंसा करते अघाते नहीं। डिप्टी साहब समर्थ गुरु के सुपात्र शिष्य थे। ऐसा मणि-कांचन संयोग दुर्लभ है। बाबासा की शिष्य परम्परा में डिप्टी कुशलसिंह खरे उतरे।

बाबासा के पदचिह्नों पर चलना खाँड़े की धार है। जीवन में इतने उच्च आदर्श अपनाना सामान्य मानव के बस की बात नहीं। फिर भी यह कहा जा सकता है कि शिव संकल्प, सतत प्रयास और समय के सदुपयोग से सफलता के द्वार खुल जाते हैं।

कुशलसिंह की आध्यात्मिक साधना का प्रसंग चलने पर बाबासा ने एक बार कहा, "एक पेड़ के कितने ही फूल लगते हैं, जिनमें अनेक यों ही गिर जाते हैं। बहुत कम ठहरते हैं। जब फल लगने लगते हैं तो कुछ चियें (अपरिपक्व फल) बनकर झड़ जाते हैं। बड़ी मुश्किल से गिनती के फल पकपाते हैं। यहाँ ऐसे अनेक आये पर डिप्टी साहिब ही पास हुए।"

मदिरापान के साथ-साथ जो विलासिता सामन्त परिवारों में घर कर गई थी, उससे राजावत कुशलसिंह भी अछूते नहीं रहे, किन्तु जब से उन्हें सन्त महापुरुष ने अपना लिया तब से उनके जीवन की डगर ही बदल गई। पुलिस लाइन्स, जयपुर से लौटने के बाद युवा थानेदार के जीवन में लक्ष्मण रेखा खिंच गई। फिर किसी पराई की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा।

पुलिस लाइन्स जयपुर के उस मधुर सुसंग ने राजावत के अन्तर्मन में नूतन प्यास जगा दी। जो क्रम आरम्भ हुआ वह जीवनपर्यन्त अबाध गति से चलता रहा। वह सदासर्वदा के लिए साक़ी के हाथ बिक गया। नित्य नियमित रूप से प्रातः चार बजे उठकर राजावत कुशलसिंह साधन-भजन में लग जाते। अपने गुरु महाराज के बताये मार्ग का अनुसरण करते और सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के साथ मानवोचित व्यवहार करते। उनके नेत्रों से सदा प्रेम की मदिरा छलकती रहती। सबसे बढ़कर बात यह रही कि राजावत में निरन्तर साधनारत रहते हुए भी प्रदर्शन की भावना लेशमात्र भी देखने में नहीं आई। गुरु महाराज की कृपा से वे साधना के पथ पर अग्रसर होते चले गये। राजावत कुशलसिंह में वे गुण उभर आये जो सन्त थानेदार में स्वाभाविक रूप से थे।

कुशलसिंह सन् 1936 में मालपुरा से जयपुर आ गये। करीब छह वर्ष तक जयपुर स्टेशन थाना सदर में थानेदार रहे। पुलिस की भाषा में उस युग में थाना सदर सबसे अधिक आमदनी का थाना माना जाता था। इस थाने की थानेदारी के लिए अनेकों के जी ललचाया करते, किन्तु युवा थानेदार सांसारिक प्रलोभनों से ऊपर उठ चुका था। वह एक ऐसे गुरु का शिष्य था, जिसने रिश्वत लेना तो दूर किसी प्याऊ पर मुफ्त में पानी तक नहीं पिया। राजावत ने कभी किसी के सामने अपना हाथ नहीं पसारा।

थाना सदर के नए थानेदार की ईमानदारी की सौरभ समूचे जयपुर नगर में फैल गई थी। यही कारण रहा होगा कि राजावत कुशलसिंह छह वर्ष तक एक ही थाने में टिके रहे। जयपुर स्टेट पुलिस में वह एक अंग्रेज अधिकारी यंग साहब का समय था। राजधानी में रहते हुए कुशलसिंह की ईमानदारी की शोहरत यंग साहब तक पहुँच गई थी। पुलिस महानिरीक्षक एफ.एस. यंग राजावत कुशलसिंह को दूसरा रामसिंह कहकर पुकारते।

डिप्टी कुशलसिंह की उच्च मानवता के अनेक उदाहरण सुनने को मिलते हैं। सन् 1953 में जब आप सवाईमाधोपुर में सी.आई. के पद पर आसीन थे, हीरासिंह नामक एक सिपाही आपके पास लगा हुआ था। हीरासिंह अचानक बीमार हो गया। डिप्टी साहब ने उसका इलाज कराया पर वह बच नहीं पाया। हीरासिंह के एक किशोर बालक था, जो उसी के पास रहा करता था। जब सिपाही अधिक बीमार हो गया तो डिप्टी साहब सब काम छोड़कर उसकी सेवा में लग गये। अन्तिम क्षणों में हीरासिंह ने डिप्टी साहब की ओर आँख खोलकर देखा। बालक वहीं खड़ा था। डिप्टी साहब को हीरासिंह ने कहा, ''यह बच्चा आपका है, इसे आप सम्भालें।''

डिप्टी साहब ने उत्तर दिया, ''तुम निश्चिन्त रहो, इसे मैं अपने पास रखूंगा।'' डिप्टी कुशलसिंह ने बालक नरपतसिंह को अपने पास रखकर पढ़ाया-लिखाया, योग्य बनाया और पुलिस में भर्ती कराया। नरपतसिंह पुलिस विभाग, राजस्थान में एस. आई. के पद पर सेवारत है।

मानवीय गुणों से ओत-प्रोत डिप्टी कुशलसिंह सन्त रामसिंह से जुड़े सत्संगी समाज में समादर की दृष्टि से देखे जाते हैं। लोग उन्हें आज भी याद करते हैं।

राज-कोष का प्रहरी

राजावत कुशलसिंह की भाँति कोई सर्व-साधारण भी गुरु वचनों को शिरोधार्य कर विश्वास के साथ आगे बढ़ गया, उसका बेड़ा पार हो गया। इस संदर्भ में पुलिस के एक पहरेदार सिपाही श्री किशन गुर्जर का प्रसंग बड़ा प्रेरणास्पद है।

श्रीकिशन गुर्जर मालपुरा के गाँव सेंतीवास का निवासी था। राजावत कुशलसिंह मालपुरा थानेदार थे। वह सर्वप्रथम राजावत कुशलसिंह के सम्पर्क में आया। राजावत की प्रेरणा से उसे सन्त थानेदार का सुसंग लाभ मिल गया। वह साधना में लग गया। उसकी लगन और निष्ठा देखकर सन्त थानेदार ने उसे नौहरेवाले महात्माजी की शरण में भेज दिया। उन दिनों वह एस.पी. मूलसिंह शेखावत के पास रह रहा था। वह कुछ समय तक एस.पी. मूलसिंह का अर्दली रहा। मूलसिंह जब नौहरे वाले महात्माजी के पास जाते तब श्रीकिशन को भी अपने साथ ले जाते। फिर वह खजाने के पहरे पर लग गया।

वह जलेब चौक जयपुर में सरकारी खजाने पर पहरा देता था। लम्बा पूरा जवान था। जब पहरे पर चढ़ता तो पुलिस की वर्दी लगाकर हाथ में राइफल लेकर पहरे पर जमकर खड़ा हो जाता। शरीर पहरा देता रहता और उसका मन समाहित होकर साधना में लग जाता। यह अभ्यास निरन्तर चलता रहा। उसे शरीर का भान नहीं रहता, वह खड़े-खड़े ही प्रगाढ़ ध्यानावस्था में पहुँच जाता। एक लम्बे समय तक यही क्रम चलता रहा। जब अगला पहरेदार आकर उसे पुकारता तब उसका ध्यान भंग होता। यह बात अधिकारियों के कानों तक पहुँच गई। किसी अधिकारी ने रात को आकर इसकी जाँच की तो पता लगा कि श्रीकिशन को अपनी सुधबुध ही नहीं है; वह शून्य में पहरा दे रहा है। यह मानकर कि वह कोई नशा करता है, बतौर सजा उसे लाइन हाज़िर कर दिया गया।

पुलिस लाइन्स में जब सब सिपाही सो जाते तब श्रीकिशन एकान्त में कहीं ध्यानावस्थित हो जाता। पुलिस लाइन्स में सुबह कवायद होती। एक दिन वह ध्यान में इतना गहरा उतर गया कि उसे कवायद का बिगुल सुनाई नहीं दिया। जब ध्यान से उपराम हुआ तो उजाला हो आया था। कवायद खत्म हो चुकी थी। वह अधिकारियों से मिला और समय पर कवायद में न पहुँच पाने के कारण अपनी लाचारी दिखाने लगा। हाज़िरी रजिस्टर में देखा। उसमें हाज़िरी लगी हुई थी। हवलदार ने बताया कि तुम तो कवायद में मौजूद थे। तुमने कोई नशा तो नहीं कर लिया है। श्रीकिशन ने मन ही मन निश्चय कर लिया कि जो मेरी हाज़िरी दे गया अब मैं उसी की नौकरी करूंगा। उसने पुलिस सेवा से त्याग-पत्र दे दिया।

एस.पी. मूलसिंह को जब यह पता लगा तो उसकी पेन्शन मंजूर करवा दी। हर छटे महीने पेंशन मिला करती। वह साल में दो बार पेंशन लेने जयपुर आता। नौहरे वाले महात्माजी के चरणों में उपस्थित होता। वह सन्त थानेदार को गुरु महाराज कहकर पुकारा करता था। अपने गुरु महाराज के दर्शन करने वे जहाँ भी होते, पहुँच जाता; दर्शन करके ही घर लौटता।

जब बाबासा निराकर हो गये तो वह समाधि पर हाज़िरी देने आता। उन दिनों गणगौरी बाजार जयपुर में चीनी की बुर्ज़ के पास तहसीलदार साहब नाहरसिंह पाटोदा (बाबासा के छोटे जामाता) के मकान पर सत्संग हुआ करता था। पूज्य माताजी वहीं विराज रही थीं। श्रीकिशन गुर्जर आया हुआ था। वह भी सत्संग में सम्मिलित हुआ। अनेक प्रेमी सत्संगी उपस्थित थे। वह पुराना सत्संगी ध्यानावस्था में गहरा उतर गया। जब पूजा सम्पूर्ण हो गई तो वह उसी ध्यानावस्था में बैठा रहा। जब बाह्यज्ञान आया तो उसके नेत्र गीले हो रहे थे। आँसू नीचे गिरने को थे।

ऊँट चराने वाले को सीख

स्थल परिवहन की जो सुविधाएं आज उपलब्ध हैं, ऐसी सुविधाएं पहले नहीं थी। उन दिनों हल्के का दौरा करने के लिए पुलिस थानेदार को ऊँट रखना होता। पुलिस वालों के ऊँट प्रायः खेतों में खुले चरा करते। भाटी रामसिंह अपने ऊँट को कभी खुला नहीं छोड़ते। खेतों में नुकसान नहीं होने देते।

कहते हैं कि एक बार वे ऊँट पर सवार होकर कहीं दौरे पर जा रहे थे। खेतों के बीच होकर रास्ता था। रास्ते के दोनों ओर हरे पौधे लहरा रहे थे। उनके ऊँट ने गर्दन फैलाकर खेत में से हरे बूंटे उखाड़ लिए और गर्दन ऊँची उठा उन्हें चबाने लगा। थानेदार साहब ने ऊँट की नकेल तानकर और अपना हाथ आगे बढ़ाकर उसके मुँह में से हरे पौधे निकाल बाहर फेंके। इसके बाद जब कभी ऐसे खेतों में होकर ऊँट गुजरता तो वे पहले से ही नकेल को संभाली हुई रखते। ऊँट को खेतों में डाचा नहीं मारने देते।

भला ऊँट को क्या दोष दें। ऊँट तो लम्बी गर्दन का पशु है। वह अपनी गर्दन का नाजायज फायदा उठा लेता है। यहाँ तो मानव ही पशु से बदतर होता जा रहा है। देश में आये दिन धाये साँड खेत उजाड़ते रहते हैं। राष्ट्रीय चरित्र कहीं टिक नहीं पा रहा है। भौतिक लिप्सा की इस चकाचौंध में मानव समाज दिग्भ्रान्त होता चला जा रहा है। नैतिक पराभव की इस विषम बेला में हमारे सन्त थानेदार भाटी रामसिंह की उच्च नैतिकता और उज्ज्वल चरित्र मानवता का प्रकाश स्तम्भ है। भारत में आगे आनेवाली पीढ़ियों को एक सुखद अनुभूति होगी कि हमारे देश में रामसिंह जैसा पुलिस थानेदार पैदा हुआ था।

थानेदार रामसिंह अपने हाथ से अपने लिए भोजन बनाया करते थे। सन् 1937 में वे पुलिस थाना साँगानेर में सेवारत थे। उनका गाँव मनोहरपुरा साँगानेर के पास में ही है। जब तक साँगानेर रहे आपका भोजन घर से बनकर आता रहा। थाने में किसी सिपाही को भेजकर अपना भोजन नहीं मँगाते। इसके लिए अपने गाँव के एक नवयुवक भँवरीलाल शर्मा को नियुक्त कर लिया था। वह भोजन लेकर आता और उनके कमरे की खिड़की में रख जाता। वही दिन में थानेदार

साहब का ऊँट चराया करता। यह व्यवस्था एक वर्ष तक इसी तरह चलती रही।

भँवरी लाल शर्मा को पता था कि थानेदार साहब सन्त महात्मा है। वह भी उनसे कुछ सीखना चाहता था, पर कोई बात पूछने की हिम्मत ही नहीं होती थी। सन्त थानेदार से क्या छिपा था। वे एक दिन उससे पूछ बैठे, 'भँवरा, तनै कोई बात कैवां तो बोल मानैक नहीं।'

भँवरीलाल ने उत्तर दिया, ''मानबा जिसी बात होसी तो मान लेस्यूं।'' यह सुनकर सन्त थानेदार को हँसी आ गई। बोले, ''चोरी अन्यायी खराब चीज़ है, आँसू बचतो रीज्ये''

''मनै मतलब समझाओ।''

सन्त थानेदार ने बताया, **'सीधी सी बात है। पराया पीसा पर मन नहीं डिगाणो। पराई नारी की तरफ बुरी निजर सूँ नहीं झाँकणो।'**

भँवरीलाल को सन्त थानेदार का उपदेश मिल गया। उसने इन दो बातों की गाँठ बाँध ली। दिन भर वह ऊँट चराता, शाम को अपने घर लौट आता। एक दिन ऐसा हुआ कि वह तो एक पेड़ की छाया में सो गया और ऊँट थोड़ा आगे निकल गया। मनोहरपुरा से लगा हुआ सांगानेर का एरोड्रम है; ऊँट एरोड्रम की ओर चला गया। एरोड्रम के तारों से कसकर (अपनी पीठ रगड़कर) ऊँट ने एरोड्रम की एक मुड्डी तोड़ दी। थाने में शिकायत पहुँच गई।

भाटी रामसिंह ने भँवरीलाल से कहा, ''म्हाने ओळमो दिवा दियो, अब तनै कोनी राखाँ।'' वह चिन्ता में पड़ गया। यह देख सन्त थानेदार को दया आ गई। वे बोले, ''तू सोच मतकर , तनै काम सिर लगा देस्यां।'' वहीं साँगानेर स्टेशन पर रेलवे में नौकरी मिल गई। पानीवाले के स्थान पर लगा दिया। पहले कच्ची नौकरी रही, फिर पक्की हो गई। उसने छत्तीस वर्ष तक रेलवे में सर्विस की। इसे वह थानेदार साहब की कृपा मानता है। सन्त महापुरुष ने उसे जो सीख दी थी, उन दो बातों पर अडिग रहा। वह पानीवाला अपनी ईमानदारी के लिए प्रसिद्ध हो गया।

एक बार उसे रेलवे प्लेटफार्म पर दो सौ रुपए पड़े मिले। उसने यात्रियों से पूछा और उस व्यक्ति को रुपए लौटा दिए, जिसके वास्तव में गिर गये थे। वह दस का नोट देने लगा तो लेने से मना कर दिया।

एक बार निवाई रेलवे स्टेशन पर एक नीम के पेड़ के नीचे उसे स्वर्ण-आभूषणों से भरा एक डिब्बा मिला। टोंक के नवाब का शाही परिवार जियारत करने लखनऊ जा रहा था। वे उन्हीं के आभूषण थे। पानीवाले ने उस डिब्बे को स्टेशन मास्टर को जमा करा दिया, जिसे सील कर दिया गया। शाही परिवार का व्यक्ति उस डिब्बे को लेने आया। जब डिब्बा जमा करानेवाले का पता लगा तो उस व्यक्ति ने पानीवाले को सीने से लगा लिया।

वह मनोहरपुरा से थोड़ी दूर एक ढ़ाणी का रहनेवाला है। अब वृद्ध हो चला है। सन्त थानेदार को राम-परमेश्वर मानता है। उसे बड़ा आत्म-सन्तोष है। अपने आपको सुखी अनुभव करता है। जब इन पंक्तियों के लेखक ने पूज्य ठाकुर साहिब के कुछ जीवन प्रसंग सुनाये तो वह वृद्ध आँखें भर लाया। बातों ही बातों में एक ऐसा सुखद प्रसंग सुनाया जिसे पहले कभी नहीं सुना था।

पुलिस थाना साँगानेर से सन्त थानेदार देर रात को अपने गाँव मनोहरपुरा आ रहे थे। सामने उन्हीं के खेत में कोई रात को चोरी से बबूल का पेड़ काट रहा था। पेड़ काटने की आवाज सुनकर आप वहीं जा लगे। पेड़ काटा जा चुका था और वह उसे ले जाने की तैयारी में था। थानेदार साहब को सामने देख वह घबरा गया। वह रंगे हाथों पकड़ा गया। थानेदार साहब ने उसे धमकाया वह हाथ जोड़कर बोला, ''अब मैं कभी नहीं काटूँगा। इस बार मुझे छोड़ दें।''

सन्त थानेदार ने आगे बढ़कर वह पेड़ उसके कंधे पर रखवा दिया और बोले, ''अब सीधा तेरे घर चला जा।''

चोर बोला, ''आप मेरा नाम किसी को मत बताना, नहीं मुझे मारेंगे।''

सन्त थानेदार ने कहा कि नहीं बताएंगे।

दूसरे दिन थानेदार साहब के ज्येष्ठ पुत्र हरिसिंह जब खेत में गये तो बबूल कटा हुआ मिला। पुत्र ने यह बात अपने पिता को बताई और कहा, ''काकासा, आप यहाँ थानेदार हैं और अपने ही खेत से कोई बबूल काट ले गया।''

सन्त थानेदार ने कोई उत्तर नहीं दिया।

दिल की किताब पढ़ा करो

आरम्भ के वर्षों में सन्त थानेदार ने जिन सत्संगियों को पूजा में अपने सामने बैठने का अवसर दिया उनमें महलाँ वाले दुर्गाराम का नाम आता है। जब भी अवसर मिलता दुर्गाराम सन्त थानेदार के सत्संग में सम्मिलित हुआ करते थे। दुर्गाराम ने डिप्टी कुशलसिंह की बड़ी सेवा की थी। वे सन्त थानेदार को बहुत प्यारे लगते। वे प्रायः मनोहरपुरा आते रहते। पत्नी का निधन हो जाने के कारण वे बहुत उदास रहने लग गये थे। उनका किसी काम में मन नहीं लगता था। एक बार यह बात उन्होंने अपने गुरु महाराज से अर्ज़ कर दी। तब से पत्नी की याद नहीं सताई। मन प्रसन्न रहने लग गया। उन्हीं दिनों एक बार वे मनोहरपुरा आये। सुबह जब जाने की इजाजत मांगी तो माताजी दस रुपए का नोट देने लगीं। दुर्गाराम नोट नहीं ले रहे थे। गुरु महाराज ने माताजी से कहा कि दुर्गाराम को आशीर्वाद दें, जिससे इसका घर बँध जाय। दो माह के भीतर सगाई और विवाह हो गया। दुर्गाराम का घर बँध गया। यह एक सुखद संयोग था कि दुर्गाराम की बारात बाबासा के ग्राम मनोहरपुरा होकर गुज़री। सन्त महापुरुष ने बारात को अपने घर भोजन कराया। बड़ा हर्ष मनाया।

दुर्गाराम की पुस्तकें पढ़ने में बड़ी रुचि थी। जब भी अवकाश मिलता धार्मिक पुस्तकें पढ़ने में लगे रहते। रामचरितमानस का पाठ किया करते। इसे वे सबसे बड़ा धार्मिक कृत्य मानते। साधना के पथ पर वे आगे बढ़ना चाहते थे, किन्तु अनवरत साधनारत रहने का राजमार्ग नहीं अपना पाये। वे पुस्तकों में ही अटक कर रह गये।

सन्त बड़े दयालु होते हैं। दुर्गाराम की इस मनोदशा को देख एक बार गुरु महाराज यह बात पूछ बैठे कि दुर्गाराम जिन्दगी भर पुस्तकें पढ़ते रहोगे, कुछ आगे की भी सोचोगे।

दुर्गाराम ने हाथ जोड़कर निवेदन किया कि मैं चाहता तो बहुत हूँ, पर साधना में मेरा मन नहीं लगता। मैं तो रामायणजी का पाठ किया करता हूँ।

गुरु महाराज ने कहा कि रामायण का पाठ करना तो अच्छा है, पर इसके साथ-साथ दिल की किताब पढ़ा करो।

दुर्गाराम ने पूछा यह कैसे पढ़ूँ?

सन्त महापुरुष ने फरमाया, **"अपने दिल पर निगाह रखो। मन को शाह-राह पर चलना सिखाओ। भाई, भगवान का सहारा ले लो। हरदम उसकी याद में मस्त रहो। रास्ता अपने आप मिल जाएगा।"**

दुर्गाराम बताते हैं कि इसके बाद मुझ पर ऐसी कृपा हुई कि अपने आप ही किताबों का शौक खत्म हो गया। मन ध्यान-भजन की ओर लग गया।

नियम और विश्वास

दुर्गासिंह भाटी नाम के एक सज्जन जयपुर स्टेट के समय पुलिस सेवा में रहे। सन्त थानेदार के साथ उनका सुसंग हो गया। वे आरम्भ से ही ईश-चिन्तन में लग गये। वृद्धावस्था में वे यदाकदा सिटी पैलेस सन्त महापुरुष के दर्शन करने आया करते थे। सन्त रामसिंह उन्हें देखकर बड़े प्रसन्न होते। सिटी पैलेस के सन्त ने उनसे कहा था कि आप इतनी दूर आने का कष्ट मत किया करो, जहाँ याद करोगे वहीं मिलना हो जाएगा। इसी विश्वास को लेकर दुर्गासिंह भाटी अपने घर पर ही साधन-भजन में लगे रहते।

सन्त महापुरुष ने जो नियम उनको बता दिए थे उनका अनुसरण करते रहे। नियम और विश्वास के बल पर कितने आगे बढ़ गये यह बात या तो वे स्वयं जानते थे या सन्त जानते थे, किसी तीसरे को कुछ भी पता नहीं था। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सन्त दुर्गासिंह के नेत्रों में एक नशा सा छाया रहता था। मुख पर सौम्य भाव देखने में आया और वे बहुत धीरज के साथ मधुर वाणी में बोलते थे।

नाहरसिंह पाटोदा बताते हैं कि दुर्गासिंह भाटी बहुत वर्ष पूर्व पूज्य ठाकुर साहिब के सम्पर्क में आ गये थे। उन्हें सत्संग का बड़ा

प्रेम था। अद्वैत वेदान्त के मतानुयायी थे। आरम्भ में एक बार वे चांदपोल की तरफ से आ रहे थे और सामने से ठाकुर साहिब। जब निकट आये तो दुर्गासिंह ने आगे बढ़कर आपके पैर पकड़ लिए और बोले, ''अब तो आपको मेरे पर कृपा करनी होगी।'' ठाकुर साहिब ने फरमाया- अच्छा आप किसी दिन सिटी पैलेस पधार आना। दुर्गासिंह भाटी सिटी पैलेस पहुँच गये। ठाकुर साहिब ने उन्हें पूजा में अपने सामने बैठाया। उन पर कृपा की और उन्हें दिव्य पथ का पथिक बना दिया। आगे चलकर सन्त दुर्गासिंह का सत्संग लाभ लेने लोग आते रहते थे।

सन्त दुर्गासिंह के मकान पर हर रविवार को सत्संग हुआ करता था। नाहरसिंह पाटोदा बताते हैं कि वे उनके सत्संग में जाया करते थे। उनका सौम्य स्वभाव और समर्पण भाव बड़ा आकर्षक लगता था। पूज्य ठाकुर साहिब का प्रसंग चलते ही वे गद्‌गद् हो उठते। वे कहा करते थे कि मुझे जो कुछ मिला है वह पूज्य ठाकुर साहिब का प्रसाद है।

श्रद्धा और समर्पण

तन भी तेरा मन भी तेरा, तेरा पिण्ड अरु प्रान।
सब कुछ तेरा तू है मेरा, यह दादू का ज्ञान॥

सन्त रामसिंह के हृदय में अपने गुरु भगवान के प्रति अगाध प्रेम था। गुरु भगवान के प्रति अटूट श्रद्धा और पूर्ण समर्पण से भावित उनका मन सदा गुरु के श्रीचरणों में लगा रहता था। गुरु भगवान उनके जीवनाधार बन गये थे। सिटी पैलेस के सत्संग में किसी ने पूछ लिया कि आप अपने गुरुदेव को भगवान कहकर क्यों संबोधित करते हैं। सन्त महापुरुष ने सीधा-सा उत्तर दिया कि वे स्वयं तो हमारी तरह एक इन्सान थे, किन्तु उनके दिल में भगवान का वास था। उन्होंने अपना मुख भगवान की ओर मोड़ लिया था।

सन्त रामसिंह ने भी भगवान को अपना बना लिया था। अपना सर्वस्व भगवान को समर्पित कर दिया था। वे पल भर भी भगवान के

बिना नहीं रह सकते थे। उनके दिल में भगवान बस गये थे। इस प्रकार अपने गुरु भगवान के प्रति कितना समर्पण था, कितना अलौकिक स्नेह संबंध था, उसका अनुमान लगाना कठिन है। भण्डारे के अवसर पर छोटे-बड़े दो नये तौलिए लेकर फतेहगढ़ जाते। तौलिए से समाधि मंदिर की सफाई करते। घर पर उसी तौलिए को काम में लेते। छोटे तौलिए को अपने तकिए पर लगाया हुआ रखते। तौलिए पर सिर टेक कर सोते। मानो गुरु भगवान की गोद में सो रहे हों। जब बड़ा तौलिया फट जाता तो उसकी रस्सी बना लेते। उस रस्सी पर अपने कपड़े सुखाते।

सन्त रामसिंह ने भगवान के भरोसे जीना सीख लिया था। सिटी पैलेस का एकान्तवास आगन्तुक सत्संगियों के लिए वरदान बन गया था। कोई कभी भी आये किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं था। राजप्रसाद के प्रहरी आपका नाम लेते ही भीतर जाने की अनुमति दे देते। सत्संगियों के लिए कहीं रोक-टोक नहीं थी। अंधेरी घुमावदार सुरंग को पारकर जैसे ही कोई सत्संगी डाढ़ीवाले ठाकुर के दरबार में पहुँचता, बिना किसी भेदभाव के भावभीना स्वागत सत्कार होता। **सिटी पैलेस के पावन प्रकोष्ठ में पैर देते ही प्रेम की बौछार आरम्भ हो जाती। जो एक बार भी इस घेरे में आ गया, वह जीवन के इस सुखद सुयोग को कभी भूल नहीं पाया, जीवन की अविस्मरणीय घटना बनकर रह जाती। ऐसे अनेक लोग मिले हैं जो उनकी एक झलक पाते ही उनके अपने हो गये।**

वह निराला सन्त नितान्त एकान्त में बैठा अपने गुरु भगवान के भरोसे अपना जीवन जी रहा था। अपने आप में पूर्ण सन्तुष्ट किसी से कोई अपेक्षा नहीं, एकरस और आनन्द में निमग्न। ढलती आयु में काया क्षीण होती जा रही थी। हाथों में प्रकम्पन बढ़ गया था। अंगुलियाँ ठीक काम नहीं करती। अपने हाथ से भोजन बनाना असम्भव होता जा रहा था। फिर भी आप सिटी पैलेस में जमे रहे। आपने अपना भार ईश्वर को सौंप दिया था। स्वयं को कोई चिन्ता नहीं थी। राम जैसे रखना चाहे उसी में राजी थे। दादू दयाल के शिष्य सन्त वाजिन्द पठान का एक पद है—

रजा तिहारी रामजी क्या मेरा सारा।

राखै ज्यों रह जायेगा वाजिन्द बिचारा॥

सिटी पैलेस का सन्त उस कठिन परिस्थिति में भी मस्त था। एक दिन स्नान करने के लिए कमीज उतारना चाहते थे। कमीज का ऊपर का बटन नहीं खुल रहा था। बहुत देर तक बटन खोलने में लगे रहे। फिर बटन को छोड़कर ठहाका लगाकर जोर से हँसे और बोले, "जागीर छीन ली गई है।"

प्रेमी सन्त का वह मुक्त अट्टहास चाहे राज प्रासाद की प्राचीर से पल भर प्रतिध्वनित होकर शून्य में विलीन हो गया हो, किन्तु राम भरोसे जीनेवाले सच्चे साधकों के लिए एक अमिट संकेत छोड़ गया। समर्पित जीवन में छाए आत्मसंतोष को उद्घाटित कर गया।

गीता में कहा है-

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

(अ.9, श्लो. 22)

उक्त भगवत्-वाणी का मर्म ग्रहण करना कठिन है। गीता के महान् टीकाकार ज्ञानेश्वर कहते हैं :-

जिसने सम्पूर्ण मनोयोगपूर्वक अपने आपको मुझे अर्पित कर दिया है, जो एकनिष्ठ होकर मेरा चिन्तन करता है, उसका योग-क्षेम मैं वहन करता हूँ। उसका हितचिन्तन मैं करने लगता हूँ।

योगेश्वर कृष्ण का यह अमर उद्घोष भली प्रकार चरितार्थ हो गया। भगवत् कृपा से तीन ऐसे समर्पित सेवादार आये जिन्होंने सिटी पैलेस के प्रेमी सन्त को हथेलियों में ले लिया।

बाबासा के तीन सेवादारों में से ईश्वर की कृपा से दो सेवादार मौजूद हैं। अतः उन पर लेखनी उठाना सामयिक नहीं। दैवयोग की बात इसमें बीच का एक सेवादार नहीं रहा। उस प्रेमी सज्जन का सत्प्रसंग ही पर्याप्त होगा। वह सीधा सादा युवक श्रद्धा और समर्पण

का साकार स्वरूप था। बड़े भक्ति भाव से उसने सिटी पैलेस के सन्त की सेवा की। सेवा का फल यह मिला कि उसका अपना जीवन ही बदल गया। हृदय में एक अजीब आत्म-संतोष जाग उठा। जीवन में एक अद्‌भुत सरसता आ गई। सत्संगी बन्धु रवीन्द्र सिंह चौहान बड़े सरल और सहृदय व्यक्ति थे। बाबासा ने उन्हें एक ही बार में अपना लिया। वे सीधे अपने कार्यालय से चलकर सिटी पैलेस आते। रात को कोई दस बजे बाद घर लौटते। प्रातः फिर आ उपस्थित होते। चौहान को ऐसी अनुभूति होती कि सन्त थानेदार उसके साथ चल रहे हैं। आगे आकर देखते तो सिटी पैलेस में मस्त हुए बैठे हैं। फिर तो चलते-फिरते, उठते-बैठते कभी साथ नहीं छोड़ते। प्रेमी सेवादार रवीन्द्र सिंह चौहान परमार्थ के पथ पर बढ़ते ही चले गये। इसे उन्होंने अपने जीवन में वसन्त का आगमन कहकर सम्बोधित किया है। इसी आशय की उनकी एक सरस रचना सन्त थानेदार को अर्पित श्रद्धांजलि के रूप में मिली है, जिसके कुछ पद प्रस्तुत हैं।[1]

ऐसा अमृत पान कराया[1]

इन नयनों ने देखी केवल, अस्थि चर्म से निर्मित काया।
अन्तर के उस प्रभा पुंज को, इन नयनों से देख न पाया।
पलकों पर रहती है हर क्षण, स्वर्णिम आभा की परछाया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥ 1॥

श्रवणों से होकर अन्तर में, जब अनगिनत बार तुम्हारी।
सुधामयी वाणी प्रतिपल क्षण, भरती रहती याद तुम्हारी।
यौवन के इस नव प्रभात में, बना बना कर गीत मिटाया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥ 2॥

---

1. रवीन्द्र सिंह चौहान के सुपुत्र सुधीर चौहान से सम्पर्क करने पर एक पुरानी कॉपी और बाबासा के जीवन प्रसंग कुछ खुले कागजों पर लिखे हुए मिले हैं। यह कविता पुरानी कॉपी में अंकित है।– **सत्संगी बन्धु यशपाल जौली के प्रयास से प्राप्त।**

जन्म-जन्म से सूख रहे थे, इस काया के होंठ बिचारे।
मेरे मन से छूट चुके थे, सुरसरिता के सभी किनारे।
किन्तु न जाने किसने आकर, ऐसा अमृत पान कराया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥3॥

राजमहल के सन्त सयाने, असली रूप छिपाया तुमने।
सुन्दर बोल सुनाने वाले, बातों में बहलाया तुमने।
यह है ऐसा राज समझ कर भी, मैं इसको समझ न पाया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥4॥

गुरु का ज्ञान समझने वाले, अपना भेद समझना होगा।
प्रीति बढ़ाने वाले पहले, अपना रूप बदलना होगा।
सांझ सवेरे आकर किसने, मुझ पर अपना शीश झुकाया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥5॥

डगर डगर पर झांक रहे हैं, मिलने वाले मीत हमारे।
मुझे जगाने आया कोई, ले नूतन अनुराग तुम्हारे।
मिला पिलाने वाला मस्ती, क्यों मैं पीने में शर्माया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥6॥
कौन कहेगा आकर मुझको, अपने आप सम्हलना होगा।
ज्योति पुंज के उस प्रकाश को, हृदयन्तर में भरना होगा।
छिप बैठे पलकों के पीछे, तुमको कोई देख न पाया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥7॥

भोर हुआ मानव जीवन के, इस उपवन में मौसम आया।
यह वसन्त पाने वालों ने, अपना जीवन सफल बनाया।
राग-द्वेष की मिटी कल्पना, सूखा जीवन फिर सरसाया।
गुरुवर पाया प्रेम तुम्हारा, फिर भी मैं पहचान न पाया॥8॥

श्रद्धा और समर्पण का जैसा भाव सत्संगी बन्धु रवीन्द्रसिंह में रहा, ऐसा ही सुन्दर भाव पुराने सत्संगी डॉ. चन्द्रगुप्त साहब में देखने को मिला। डॉ. चन्द्रगुप्त पूज्य ठाकुर साहिब का नियमित रूप से सुसंग लाभ लेते रहे। उनके परिवार में बाबासा के प्रति अगाध श्रद्धा है। उनके

यहाँ तब से ही नियमित सत्संग चलता है। जयपुर और जोधपुर में ऐसे अनेक परिवार हैं जो सन्त थानेदार को अपना सर्वस्व मानते हैं। इधर जयपुर में हर रविवार को राम समाधि आश्रम पर सत्संग का आयोजन चलता है।

परमार्थ के पथ पर

सत्याश्रम हुसैनपुरा मीठड़ी के सन्त श्यामजी बापजी के और जयपुर के सन्त ठाकुर रामसिंह के परस्पर कोई पारलौकिक संबंध रहे होंगे। ये ऐसी रहस्यपूर्ण बातें हैं जिनकी बुद्धि के बल पर विवेचना नहीं की जा सकती। श्यामजी बापजी दूर बैठे ही सिटी पैलेस के सत्संग में सम्मिलित हो जाते। वे दोनों एक-दूसरे को जानते पहचानते और परस्पर आदान-प्रदान चलता रहता।

पश्चिम राजस्थान के बालुकामय प्रदेश में नागौर जिले के एक छोटे से गाँव में एक ऐसे विलक्षण बालक ने जन्म लिया जो जन्म-सिद्ध-योगी था। बालक श्यामसिंह जब थोड़ा बड़ा हुआ तो उसमें अद्‌भुत लक्षण प्रकट होने लगे। वह निर्जन एकान्त में चला जाता और ध्यानावस्थित हो जाता। वह सौम्य स्वभाव का मितभाषी चिन्तनशील बालक था जो अपने आप में मस्त रहता। अपने गाँव हुसैनपुरा के निकट मीठड़ी में शिक्षा सम्पूर्ण करने के बाद वह बालक ग्राम भारती विद्यापीठ कोठारी में पढ़ने चला गया। वह विद्यापीठ के छात्रावास में रहने लगा। वहाँ वह विद्यापीठ के प्रधानाध्यापक बैजनाथ शर्मा के सम्पर्क में आया। शेखावाटी के विख्यात नाथ सिद्ध बाबा श्रद्धानाथ रमते-घूमते जब चाहते अपने प्रिय शिष्य बैजनाथ शर्मा के पास कोठारी पर आ जाते। एक बार योगी श्रद्धानाथ विद्यापीठ कोठारी के ऊँचे टीले पर रात को विश्राम कर रहे थे। बालक श्यामसिंह रात को उनके पास आ गया। उनके श्रीचरणों में बैठकर ध्यान मग्न हो गया। कहते हैं रात में एक प्रहर तक ध्यानावस्थित रहा। बालक की इस उच्चावस्था को देखकर सिद्ध योगी बाबा श्रद्धानाथ बड़े प्रसन्न हुए।

ग्राम भारती विद्यापीठ कोठारी में प्रवेश लेने से पूर्व बालक श्यामसिंह में वैराग्य जाग्रत हो गया था। वह घर छोड़कर लोहार्गल के पर्वत पर चला गया। एक पहाड़ी की चोटी पर ध्यानावस्थित हो गया। वह सूर्योदय तक ध्यानमग्न रहा। वहाँ उसे एक महात्मा के दर्शन हुए। महात्मा पूर्णानन्द ने बताया कि मैं तुम्हारा गुरु हूँ। घर लौट जाओ। तुम्हें घर बैठे ही मेरी ओर से ज्ञान लाभ होगा। पहले पढ़ लिखकर योग्य बनो।

सत्याश्रम बरेली के महान सन्त पूर्णानन्द का सन् 1960 में देहावसान हो गया। महात्मा पूर्णानन्द के और सन्त थानेदार के परस्पर प्रगाढ़ संबंध थे। ब्रह्मलीन होने से पूर्व महात्मा पूर्णानन्द ने अपने शिष्य बालक श्यामसिंह के बारे में बाबासा को कोई पारमार्थिक संकेत किया। उधर बालक श्यामसिंह को स्वप्नादेश हुआ कि तुम जयपुर के सन्त थानेदार रामसिंह जी साहिब का सुसंग करना। ऐसा प्रतीत होता है कि तब से ही बालक श्यामसिंह घर बैठे ही सिटी पैलेस के सत्संग में सम्मिलित होने लग गया था। वह ध्यानावस्था में सिटी पैलेस का सुसंग लाभ लेता रहता।

बालक श्यामसिंह राठौड़ आगे चलकर एक उच्चकोटि के सन्त बने। सत्संगी बन्धु गुमानसिंह मेड़तिया के कथनानुसार श्यामजी बापजी अक्टूबर 1968 में सर्वप्रथम जोबनेर से चलकर सिटी पैलेस जयपुर में बाबासा से मिलने आये। स्वयं गुमानसिंह मेड़तिया और जयपुर के सत्संगी बन्धु घीसालाल शर्मा जोबनेर से श्यामजी बापजी के साथ आये थे। तीनों ही अनजान थे। इससे पूर्व कभी सिटी पैलेस नहीं आये थे। जैसे ही सिटी पैलेस के पावन प्रकोष्ठ में प्रवेश किया, श्यामजी को देखकर बाबासा अतीव प्रसन्न हुए। सहसा बोले, ''आप आ गये, अच्छा किया। अब गुरु महिमा हो जाय।'' भाव भरे भजन आरम्भ हुए। सत्संग चलता रहा।

दूसरे दिन प्रातः गुमानसिंह मेड़तिया के संग श्यामजी बापजी सिटी पैलेस आये। बापजी ने गुमानसिंह से कहा कि आप यन्त्रालय देखिए। स्वयं अकेले बाबासा से मिलने गये। उस दिन तीन बार अकेले ही बाबासा से मिले। उन दिनों श्यामजी बापजी सुजानगढ़ कॉलेज में पढ़ रहे थे। दूसरी बार फिर सुजानगढ़ से चलकर जोबनेर आये।

गुमानसिंह मेड़तिया और घीसालाल शर्मा कृषि कॉलेज जोबनेर में पढ़ रहे थे। उन दोनों को साथ लेकर एक बार फिर डाढ़ीवाले ठाकुर के दरबार में हाज़िर हुए। उस दिन बड़ा सुखद आन्तरिक सत्संग चला। बापजी की तो बात ही निराली थी। मेड़तिया और शर्मा भाव विभोर हो उठे। बाबासा ने बापजी से कहा कि आप अपने हाथ से इन सबको प्रसाद दें। प्रसाद वितरण के बाद बाबासा मुस्कराए। एक गहरे भाव जगत में उतर गये। फिर सम्भलकर श्यामजी से बोले, ''आज हमने अमानत लौटा दी है।'' यह सुनकर श्यामजी बापजी ने बाबासा को सिर झुकाकर नमन किया। एकाएक शान्त और गम्भीर हो गये। वाणी में कुछ भी प्रकट नहीं किया। सिटी पैलेस से लौटने पर मार्ग में मेड़तिया ने बापजी से पूछा कि पूज्य ठाकुर साहिब ने अमानत लौटाने की क्या बात कही। बापजी इस बात को टालना चाहते थे। दरवेशी पर्दापोशी के प्रबल पक्षधर थे। अपने जीवन काल में कभी कोई भेद नहीं दिया। केवल इतना-सा बताया कि यह कोई परमार्थ की अमानत की बात है। मेरे गुरुदेव पूज्य ठाकुर साहिब के पास अमानत रख गये थे।

अमानत हाथ लगने के बाद श्यामजी बापजी की परमहंस की सी स्थिति हो गई थी। शेष जीवन में वे घर बार छोड़कर गुमानसिंह मेड़तिया के पास जोधपुर रहे। सन्त थानेदार के समर्पित सत्संगी अमरचन्द मेहता उन्हीं दिनों जयपुर से स्थानान्तरण होकर जोधपुर चले गये। श्यामजी बापजी के श्रीचरणों में उपस्थित हुए। पूज्य ठाकुर साहिब के प्रेमी को पाकर श्यामजी बापजी बड़े प्रसन्न हुए। आरम्भ में मेहता ने अपना कोई परिचय नहीं दिया। कोई भेद नहीं बताया। पर सन्त से क्या छिपा था। प्रथम दिन ही जो प्रेम प्रकट किया उसमें सारा भेद खुल गया। पूज्य ठाकुर साहिब उन दिनों निराकार हो गये थे। मेहता पर ऐसी कृपा बरसी कि बाबासा का सान्निध्य लाभ मिल गया। मेहता को ऐसा प्रतीत होने लगा कि सन्त महापुरुष उसके साथ रहते हैं। वही सफेद डाढ़ी, वही गोल साफा। जोधपुर में अनेक सत्संगी मेहता से जुड़ गये हैं। युवा सत्संगी रामअवतार शर्मा ने बताया कि हमारे यहाँ जोधपुर में सन्त महापुरुष की कृपा से अच्छा सत्संग चलता है।

मेहता अमरचन्द बताते हैं कि पहले दिन ही इतना आनन्द आया कि मैं नियमित रूप से बापजी की संगत में जाने लगा। वे दस बजे पूर्व दो बार ध्यान किया करते थे। शाम को लम्बे समय तक सत्संग होता रहता। समय का पता ही नहीं लगता।

रामाश्रम सत्संग में श्यामजी बापजी केवल दो ही व्यक्तियों को जानते थे। सुसंग वे ठाकुर रामसिंह का करते और प्रवचन पण्डित मिहीलाल का सुनते। अपने सेवादार मेड़तिया गुमानसिंह को साथ लेकर वे दूर-दूर तक पण्डितजी का प्रवचन सुनने पहुँच जाते। किसी को अपना परिचय नहीं देते।

गुमानसिंह में सन्त सेवा का बीजारोपण कैसे हुआ इसका एक रोचक प्रसंग है। श्यामजी बापजी के कहने पर गुमानसिंह सिटी पैलेस बाबासा के दर्शनार्थ प्रायः शनिवार को जोबनेर से आ जाया करते थे। एक लम्बे समय तक बाबासा ने आगन्तुक से नाम, गाँव या परिचय नहीं पूछा। कभी कोई उपदेश की बात नहीं कही। आइए साहब, ध्यान कीजिए, साहब अब आप जाइए। बस इतना बोलते। मेड़तिया की यह इच्छा होती कि मैं भी बाबासा की कोई सेवा करूँ। अन्तिम बार टी.बी. सैनेटोरियम के कॉटेज वार्ड में मेड़तिया उपस्थित हुए। बाबासा कॉटेज के बरामदे में लेटे हुए थे। काफी देर बाद बाबासा ने मेड़तिया से कहा कि अब आप जाइए। मेड़तिया के मन में एक खटक रह गई कि पूज्य बाबासा की कभी सेवा नहीं की। जीवन में कभी सेवा करने का अवसर ही नहीं दिया। इतने में पीछे से आवाज आई, 'साहब वापस पधारिये।'

गुमानसिंह लौटकर आये। जूते खोले, मौजे उतारे, हाथ धोये और सेवा में उपस्थित हो गये। बाबासा ने मुस्कराते हुए धीरे से कहा, "जरा यह पंखा बन्द कर दीजिए।" आखिर सन्त थानेदार ने सेवा का अवसर दे ही दिया। गुमानसिंह के मनोरथ पूर्ण हुए। वर्षों तक श्यामजी बापजी की सेवा की। मेड़तिया जीवनपर्यन्त सन्त सेवा में लगे रहे। सत्याश्रम हुसैनपुरा मीठड़ी, जिला नागौर में बापजी का समाधि स्थल है। छोटा-सा सुरम्य समाधि मंदिर है। जल और प्रकाश की सुविधा है। आवास के लिए पर्याप्त कमरे हैं। चारदीवारी है। गाँव से थोड़ा दूर एकान्त स्थान है। साधना के लिए उपयुक्त

जगह है। सत्याश्रम में हर साल वार्षिक भण्डारा 20 से 22 जून तक होता है। वसन्त पंचमी को वसन्त महोत्सव और सत्संग होता है।

श्यामजी बापजी की दिव्य प्रेरणा से एक दूसरे सत्संगी नथमल साँखला सिटी पैलेस डाढ़ीवाले ठाकुर के दरबार में पहुँच गये। नथमल साँखला इकतारे पर भजन-वाणी गाया करते। अच्छे संगीतकार हैं। पावन प्रकोष्ठ में प्रवेश करते ही वृद्ध सन्त के चरण-स्पर्श करने को आगे बढ़े। बाबासा बोले, ''रहने दीजिए, इन पैरों और आपके पैरों में कोई फर्क नहीं है।'' एक आसन दे दिया, जिस पर संगीतकार चुपचाप बैठ गया। परस्पर कोई परिचय नहीं हुआ। कुछ अन्तराल के बाद बाबासा बोले, ''आपको भजन बोलना आता है, मुझे भी कुछ सुनाइये।''

साँखला ने सर्वप्रथम एक वाणी सुनाई- 'साधो भाई हरि गुरु अन्तर नाहीं।'

वाणी सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। साँखला ने कुछ और भजन सुनाये। दरअसल सांखला अध्यात्म का सही मार्ग पाने के उद्देश्य से सूफी संत के पास आये थे, किन्तु संकोचवश कुछ पूछ नहीं पाये। जब साँखला विदा होने लगे तो बाबासा ने कहा, 'आप जो साधना करते हैं, करते रहिए। गुरु भगवान की कृपा से मार्ग मिल जाएगा।'

संगीतकार अपनी साधना में लगा रहा। भजन-भाव करता रहा, किन्तु उससे वह सन्तुष्ट नहीं था। भजनों में जो भाव व्यक्त किया गया है वह उस सीमा में प्रवेश चाहता था। मार्ग मिल नहीं रहा था। बाबासा के निराकार होने के बाद नथमल साँखला एक बार जयपुर आये। मनोहरपुरा समाधि मंदिर पर हाज़िरी देने पहुँचे। वही वाणी और भाव भरे भजन सुनाये। फिर समाधि पर आँख बन्द करके बैठे। ऐसा फैज़ उतरा कि अजीब मस्ती छा गई। मन शान्त और समाहित हो गया। ऐसा लगा कि डाढ़ीवाला ठाकुर सामने आ बैठा है। उसी समय भीतर दिव्य प्रकाश छा गया। जब आँखें खोली तो बाहर भी वैसा ही प्रकाश दिखाई दिया। उनका अपना शरीर, समाधि मंदिर और आसपास के सभी पेड़ पौधे उसी प्रकाश में डूब रहे थे। उस दिन से अध्यात्म का पथ खुल गया। मार्ग मिल गया।

सिटी पैलेस में सत्संग

सिटी पैलेस जयपुर में अनेक साधक सन्त महापुरुष का सत्संग लाभ लेने आते रहते थे। वे किसी की भी आस्था को झझकोरते नहीं; जो जिस मार्ग पर लगा हुआ है, उसकी चेतना का उसी दिशा में उत्थान कर देते।

अनेक सत्संगी आपका सान्निध्य लाभ लेते रहे हैं। इनमें एक सत्संगी सुदूर शेखावाटी से चलकर यदाकदा सिटी पैलेस आया करता था। अपनी डायरी में सत्संगी ने सिटी पैलेस के सत्संग की बातें लिखी हैं। इस डायरी में भाटी रामसिंह को राम महाशय कहकर संबोधित किया है। ऐसे कुछ प्रसंग यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

सत्संग का आनन्द

आज गुरुवार 6 जून 1963 है। प्रातः आठ बजे का समय है। सिटी पैलेस के एक प्रकोष्ठ में सत्संग का आनन्द उड़ रहा है। राम महाशय सामने विराजमान हैं, प्रसन्न मुद्रा में। वही गहरा मूँगिया रंग का गोल साफा, आसमानी रंग की आधी आस्तीन की कमीज़, मोटी सफेद धोती। श्वेत उज्जवल दाढ़ी, उभरे हुए निर्मल नेत्र और मुख पर मुस्कान। विकसित नेत्रों से करुणा झर रही है।

हँसी खुशी की बातें चल रही हैं। उसी समय आन्तरिक सत्संग आरम्भ हुआ। मन समाहित होता चला गया। ध्यान अच्छा जमा। ध्यान के उपरान्त आप शान्त बैठे रहे।

अन्य सत्संगियों के विदा हो जाने पर आप भीतर गये, एक पुस्तक लेकर आये। आपने खेजड़े के रास्ते वाले मौलवी साहिब हिदायत अली खाँ साहिब की लिखी हुई उर्दू की इस पुस्तक में से खामोश रहने की महिमा पढ़ कर सुनाई। इसी प्रसंग में एक जगह आया कि तू खामोश रहकर मुझे खुश नहीं कर सकता तो बोलकर तो क्या कर सकता है।

आपने फरमाया, खामोशी का तात्पर्य उसकी याद में चुप रहने से है। बस हरदम उसकी याद बनी रहे।

मंगलवार का सत्संग

11 जून, 1963

संध्या का समय है, राम महाशय फर्श पर शान्त चित्त बैठे हैं। मुख पर सौम्य भाव की छटा छा रही है। सिटी पैलेस में सत्संग का आनन्द उड़ रहा है। एक-एक कर सब सत्संगी चले गये।

आज मंगलवार है। मंगलवार के दिन जज साहब के मकान पर सत्संग होता है। राम महाशय को मंगलवार की याद आ गई। बोले, ''चलो आपको जज साहब के यहां सत्संग दिखा लाते हैं।'' सिटी पैलेस से पैदल चलकर सुभाष चौक जज साहब के मकान पर पहुँचे।[1]

गर्मियों के दिन हैं। दूसरी मंजिल की खुली छत पर सत्संग चल रहा है। पूरी छत सत्संगियों से भरी है। सीढ़ियों की ओर सत्संगियों की पीठ है। राम महाशय सीढ़ियों पर चढ़ कर सबसे पीछे दरी पर बैठनेवाले ही थे कि जज साहब की दृष्टि पड़ गई। जज साहब हाथ जोड़कर खड़े हो गये, उनके साथ सारे सत्संगी भी खड़े हो गये। यह देखकर राम महाशय ने विनम्र भाव से कहा,

---

1. श्री जगन्नाथ प्रसाद माथुर की हवेली, सुभाष चौक, जयपुर।

''बैठिये साहब, उनके दरबार में खड़े होने की क्या जरूरत है।''

जज साहब ने हँसते हुए उत्तर दिया, ''उनके दरबार के किसी दरबारी के आने पर खड़ा होना पड़ता है।''

इतने में जज साहब राम महाशय के निकट आ लगे। आप किंचित मुस्कराये और जज साहब की ओर कुछ क्षण हाथ जोड़े खड़े रहे। आपका वह अद्‌भुत विनीत भाव दर्शनीय था। यह दुर्लभ दृश्य देख मन आनन्द विभोर हो उठा। सहसा सन्त कबीर की एक साखी याद हो आई-

कबीर चेरा सन्त का, दासन का परदास।
कबीर ऐसे हो रहा, ज्यों पाऊँ तले घास॥

तदुपरान्त जज साहब ने विनीत आग्रह किया कि आप आगे पधारिए, किन्तु राम महाशय राजी नहीं हुए। वे वहीं दरी पर सबसे पीछे बैठ गये। जज साहब भी पास में ही बैठ गये। आपने सत्संगियों से राम महाशय की ओर मुँह करके बैठने को कहा। कुछ अन्तराल तक सब शान्त बैठे रहे। वह मौन की घड़ी प्रवचन से भी बढ़कर रही। कोई कुछ नहीं बोल रहा था। राम महाशय शान्त बैठे अन्तर्लीन होते चले जा रहे थे। मन्द प्रकाश में सत्संगी उनके मुख की ओर देख रहे थे। मौन सत्संग चलता रहा।

राम महाशय यदा-कदा ही सत्संग में सम्मिलित होते हैं। अचानक उनके आगमन से सत्संग ने नया मोड़ ले लिया। कुछ समय बाद जज साहब ने निवेदन किया, ''इन सत्संगियों को आप कुछ कहिएगा।''

आप थोड़ी देर उसी अन्तर्मुखी भाव मुद्रा में बैठे रहे। फिर एक कहानी कहकर यह बताया कि अपनी धर्मपत्नी को भी हमख़याल बना लेना चाहिए।

फिर वही नीरव शान्ति छा गई। अन्त में आप कहने लगे, **"जिसे हम ढूंढ़ रहे हैं, वह भीतर ही है। उन्हें प्यार करना होगा, यदि हम उनकी तरफ दो कदम चलेंगे तो वे हमारी तरफ चार कदम चलेंगे। वे परमपिता जो हैं।"**

"इस मन की तरफ ध्यान देना होगा। इसमें मुहब्बत का जज़्बा पैदा करना होगा। बात यह है कि मन में हर समय उनकी याद बनी रहे।"

लोटपोट गुरु की ओट

29 मई 1964

आज जब सिटी पैलेस पहुँचा, आप लेट रहे थे। मुझे भी लेटने को कहा। मैं आपकी बगल में एक ओर लेट गया। कुछ ही समय में एक नशा सा छा गया। बहुत संभलने पर भी अपने को संभाल नहीं पाया। ऐसी अद्‌भुत स्थिति बनी कि होश ही न रहा। संसार का विस्मरण हो गया। मन आनन्द की भावभूमि में प्रवेश कर गया।

आपने प्रसंगवश कहा था कि भागीरथजी और गोपाल बाबू तो यहाँ आते ही लोटपोट हो जाते हैं। आप तो नशेबाज हो गए, इस कारण कम असर होता है।

आपने एक बार फरमाया था "यह ज़रुरी नहीं है कि आँख मूँद कर ही बैठा जाये। जब किसी बुज़ुर्ग के सामने जाओ तो अदब और सब्र के साथ उनकी इनायत का इन्तज़ार करो। जो करोड़पति है वह चाहे तो किसी को लाख रुपये दे सकता है।"

आपने प्रसंगवश कहा था कि खाते-पीते समय और सोने से पहले परमात्मा को याद करते रहना चाहिए। इससे खाने का जो रस बनता है, उसमें प्रेम का जज़्बा समा जाता है, जो नस नस में पहुँच कर उसकी याद दिलाता है। नींद का समय स्मरण में गिन लिया जाता है। जिसकी याद करते-करते हम सोते हैं, उठते ही सर्वप्रथम उसी की याद आती है।

भले-बुरे, छोटे-मोटे सभी को देखकर उसकी याद आती है। उसकी कारीगरी का कमाल उसकी याद दिलाता है। हर शब्द में वही वह सुनाई देता है। पास में एक ओर टेबल फैन चल रहा था, उसे संकेत करके आप कहने लगे, इसमें भी वही शब्द हो रहा है।

परमपिता परमात्मा पग-पग पर हमारी मदद करता रहता है। कुछ का तो हमें पता लगता है; कुछ का लगता ही नहीं। वह कितना दयालु है। अपने यहाँ कोटड़ी के चौक में कुआँ है। एक गाय कुएँ में गिर गई। बाहर निकाली तो जिन्दा निकल आई। जैसे ही बाहर आई उठकर टपटप चल दी।

इसी तरह नवलगढ़ के पुलिस थाने में चार सिपाही लेकर एक डकैत को पकड़ने गया। वह डकैत कहा करता था कि जब मैं पकड़ा जाऊँगा तो कितनी ही पुलिस वालों की रांड़ें होंगी। मैं ऐसे थोड़ा ही पकड़ा जाऊँगा। टोकरे में डलकर जाऊँगा। गोया जिन्दा नहीं पकड़ा जाऊँगा। जब हमने घेरा डालकर उसको पकड़ा तो एक दो लाठी के पड़ते ही गाय-गाय चिल्लाया। पकड़ कर थाने ले आये।

दूसरे दिन किसी ने उससे पूछा था, ''मर्द, रात के समय पहाड़ी के निकट तुझे चार सिपाहियों ने कैसे पकड़ लिया।''

उसने कहा, ''क्या बताऊँ, मुझे तो पहाड़ी के पत्थर-पत्थर में पुलिस दिखाई दे रही थी।''

यह सब उसकी लीला है।

जी नहीं चाहता कि आपके पास से उठकर चला जाऊँ। रात्रि के ग्यारह बज रहे हैं। आपने मुस्कराते हुए जाने का आदेश दिया। मैंने निवेदन किया कि मैं दशहरे की छुट्टियों में हाज़िर होऊँगा।

आपने बड़े प्रेम से फरमाया, ''आपका घर है, जब चाहें आ सकते हैं।''

मैं भावों से भरा हुआ जयपुर की सूनी सड़क पर चाँदपोल की ओर चला आ रहा हूँ। आपजी (ताऊजी) के मकान पर कब पहुँचा, पता ही नहीं रहा।

बुढ़ापे का सत्य

24 मई 1965

पूजा के बाद आप विश्राम करने लगे। कभी नेत्र मूँद लेते और कभी खोल देते। थोड़ी देर में अचानक उठ बैठे; दिल खोलकर ठहाका लगाया; हँसकर कहने लगे—देखो इस झोंपड़ी से इस जीव को कितना मोह हो गया है। बुढ़ापे में शरीर शिथिल हो जाता है। इन्द्रियाँ उत्तर दे देती हैं, पर जी चाहता है - झोपड़ी बनी रहे। ज्यों-ज्यों बुढ़ापा आता है, मोह भी बढ़ता जाता है। इसी प्रसंग में राम महाशय ने एक सुन्दर दृष्टान्त सुनाया—

एक बार नारद जी ने भगवान से कहा कि महाराज संसार में प्राणी अनेक दुःख भोग रहे हैं और इधर आपका बैकुण्ठ धाम खाली पड़ा है, ऐसे दुःखी जीवों को आप बैकुण्ठ में स्थान क्यों नहीं दे देते।

भगवान ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, ''अच्छा नारद जी जाओ, आप ले आओ ऐसे लोगों को।''

नारदजी संसार में विचरने लगे। चलते-चलते उन्हें एक डोकरी (बुढ़िया) मिली, जिसका परिवार वाले बात-बात में तिरस्कार करते। कोई बच्चा पानी का लोटा उठा ले जाता तो कोई बच्चा सिर में मार जाता। नारदजी ने देखा इससे बढ़कर दुःखी कौन हो सकता है।

नारदजी ने निकट आकर डोकरी से कहा , ''तुम यहाँ बहुत दुःखी मालूम होती हो। चलो, मैं तुम्हें भगवान के पास बैकुण्ठ धाम ले चलूँ। वहाँ सब प्रकार के सुख हैं।''

डोकरी ने उत्तर दिया, ''नहीं महाराज, मैं तो यहाँ बहुत आराम में हूँ। मेरे बेटे, पोते, परपोते, इन्हें छोड़कर कहाँ जाऊँ।''

जब नारदजी ने बहुत आग्रह किया तो बुढ़िया कहने लगी - ''मेरे अभी दो पोते कुँवारे हैं, अच्छा, इनकी शादी हो जाने पर चलूँगी।''

नारदजी कुछ वर्षों बाद फिर आये और चलने को कहने लगे तो डोकरी बोली -''बस बड़े परपोते की शादी हो जाय फिर चलूँगी।''

जब नारदजी तीसरी बार आये तो डोकरी वहाँ नहीं मिली।नारदजी ने नेत्र मूँदकर अन्तर्दृष्टि से देखा तो पता लगा कि वह मर कर कुत्तिया बन गई है और वहीं मकान के दरवाज़े पर बैठी है।

नारदजी ने कुत्तिया के पास जाकर धीरे से कहा, ''अब बैकुण्ठ धाम चलती हो क्या?''

कुत्तिया ने जवाब दिया, ''कैसे चलूँ महाराज, इस घर की रखवाली कौन करेगा? इन लोगों को तो घर की परवाह ही नहीं है।मैं जीते जी बिगाड़ कैसे देख सकती हूँ।''

यही हाल है इस संसार का। सब प्राणी अपने हाल में मस्त हैं। भगवान की कैसी अपार माया है।यह कहकर शान्त और गम्भीर हो गये।

थोड़ी देर बाद आपने फरमाया - **बेऐब जात खुदा की है।हर एक परहेज़गार उसकी बख्शिश का मुन्तज़िर है।**

इबादत का इज़हार करना अच्छा नहीं और एक दृष्टान्त सुनाया–

एक भक्त उम्रभर इबादत करके उसके दरबार में हाज़िर हुआ। यह पूछा गया कि तुमने क्या क्या किया। भक्त ने बताया–

''मैं उम्र भर इबादत करता रहा।''

''इबाबत किस जगह पर करते थे?''

''एक शिला पर बैठ कर।''

''ठीक है तो इतने साल तुम शिला पर रहे, अब उतने ही साल शिला तुम्हारे सिर पर रहेगी।''

गर्व ठीक नहीं। सब कुछ उसकी दया है। वह परमपिता परमात्मा है।

राम महाशय बड़े विनोदप्रिय हैं। सदा हँसते-हँसाते रहते हैं। आपने हँसते हुए कहा कि हम भी टटोल लें, कहीं भूल तो नहीं हो रही है।

आपने मौन की महिमा बतलाई। यदि किसी के मुख से हीरे-लाल भी झड़ें, तो भी मौन रहना उससे बढ़कर है।

'श्रुति की टेर' नामक पुस्तक का प्रसंग चला। आपने फरमाया –

हर हाल में खुश रहना और उसकी याद में अपने को भूल जाना, यही श्रुति की टेर है।

ऐसा कहा जाता है कि हम उस विराट विश्वात्मा के एक अंग हैं। जैसे हमारा एक अंग खराब हो जाए तो सारे शरीर में पीड़ा पहुँचती है, इसी प्रकार हमारे उदास रहने पर उस विश्वात्मा को कष्ट होता है। इसी तरह हमें सदा प्रसन्नचित्त और मुस्कराते रहना चाहिए।

सन्त परम हितकारी

रामाश्रम सत्संग उत्तर भारत में अनेक स्थानों पर चलता है। जयपुर में रामनवमी के अवसर पर सत्संग होता है। इस सत्संग में आरम्भ में बाबासा के गुरुभाई परम सन्त डॉ. चतुर्भुज सहाय साहिब पधारते थे और पिछले वर्षों में उनके प्रिय शिष्य पण्डित मिहीलाल। रामनवमी पर आयोजित होने वाले इस सत्संग समारोह में मोटी धोती और मूंगियां रंग का गोल साफा बांधे राजस्थान का डाढ़ीवाला ठाकुर प्रायः चुपचाप पीछे की पंक्ति में आकर बैठ जाता।

रामाश्रम सत्संग समाज में डाढ़ीवाले ठाकुर का बड़ा समादर रहा है। उन्हें पीछे बैठे देखकर सामने वाले सत्संगी जब इधर-उधर हटने का उपक्रम करते तो आप बड़ी मधुर वाणी में सत्संगियों से कहते, ''आराम से बैठिए। हमारे पण्डितजी का प्रवचन सुनिए।''

जैसे ही पण्डित मिहीलाल की उन पर दृष्टि पड़ती वे उच्चासन से उतरकर डाढ़ीवाले ठाकुर के पास आते और उनसे सामने चलकर बैठने का आग्रह करते तो आप बड़े विनम्र भाव से निवेदन करते कि मैं बड़े आराम से बैठा हूँ, साहब आप कोई ख़याल न कीजिए। यह सब तो हमारे गुरु भगवान का दरबार है। मैं आपकी वाणी सुनने चला आया। प्रवचन होने दीजिए। उपस्थित सत्संगी सन्त थानेदार की यह विनम्र वार्ता सुन भाव-विभोर हो उठते। बहुत प्रार्थना करने पर भी वह डाढ़ीवाला ठाकुर कभी आगे आकर नहीं बैठा।

सत्संगियों के बीच में आकर सन्त थानेदार ने अपने आपको छिपाये रखने में कोई काण-कसर नहीं छोड़ी। किन्तु उच्च साधना की अलौकिक सौरभ छिपाने पर भी नहीं छिपती। उनके दर्शन मात्र से लोगो

में आनन्द की लहर दौड़ उठती। ठण्डी प्याऊ के मधुर संस्मरण इसके साक्षी हैं।

महानगरी जयपुर के निकट मालवीय नगर और जगतपुरा रेलवे स्टेशन से दक्षिण दिशा में राम समाधि आश्रम, मनोहरपुरा एक शान्त एकान्त स्थल है। हरे वृक्षों से घिरा सुरम्य आश्रम है। स्वच्छ और सुखद वातावरण है। आश्रम के मध्य भाग में सन्त थानेदार का श्वेत संगमरमर से निर्मित भव्य समाधि मंदिर है। साधना के लिए सर्वथा उपयुक्त स्थान है। हर वर्ष मकर संक्रांति को दो दिवस तक और सन्त जयन्ती तीन सितम्बर को एक दिन सत्संग के विशेष आयोजन होते हैं। सन्त थानेदार के सुपुत्र नारायणसिंह राम समाधि आश्रम, मनोहरपुरा में रहकर आश्रम व्यवस्था सम्भालते रहे। उस अलबेले सन्त का सान्निध्य लाभ लेने लोग आते रहते हैं। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में राजस्थान के दाढ़ीवाले सूफी सन्त ने अपने शरीर की ओर संकेत करते हुए कहा था, **'अभी तो मेरा अस्तित्व इस पिंजरे में बंद है, जब इससे छुटकारा मिल जाएगा तो व्यापक हो जाऊँगा।'**

सचमुच सन्त थानेदार व्यापक हो गये हैं। जहाँ याद करो वहीं सहायता में तत्पर खड़े हैं। उनकी महिमा निरन्तर विस्तार पा रही है। तीन सितम्बर सन् 1997 को सन्त थानेदार की शत-जयन्ती थी। उनका यश निरन्तर फैलता चला जा रहा है। मकर संक्रान्ति के सत्संग में उनके समाधि मंदिर पर लोग खिंचे चले आते हैं। यहाँ भाव-भक्ति की भागीरथी बहती है। ऐसे अनेक लोग जिन्हें सूफी सन्त के सदेह दर्शन सुलभ नहीं हुए वे समाधि मंदिर पर आकर लोट-पोट हो जाते हैं। **सन्त थानेदार अपना स्वभाव भूले नहीं है। रपट दर्ज कराओ सुनाई होती है। उन सत्पुरुष की कृपा सब पर बरस रही है। रामसमाधि की सौरभ चारों दिशाओं में फैल रही है। वह सिटी पैलेस का सन्त अब समाधि पर आ बैठा है।**